नया युग
नई धरा
नई धारा

~~हिन्दी और उर्दू कविताओं का~~ संग्रह

हिन्दी और उर्दू कविताएं

राधेकान्त दवे

प्रकाशक

Retave

सेहरा

हिन्दी हमारी राजभाषा है। यह हमारी संपर्क-भाषा अर्थात् हम भारतवासियों को परस्पर जोड़नेवाली Link Language है। अभी तो हिन्दी अपना रूप और आकार ले रही है। पूरे भारतवासियों के योगदान से इसका स्वरूप निखर उठेगा। इसीके साथ-साथ हिन्दी साहित्य भी समृद्ध होगा। इस दिशा में मेरा यह कविता-संग्रह एक नम्र प्रयास है। आशा है इसका स्वागत होगा।

इस कविता-संग्रह में मेरी हिन्दी कविताओं के उपरान्त कुछ उर्दू कविताएँ (देवनागरी में लिखित) भी हैं। इसके साथ ही कतिपय वैदिक सूक्तों के और बाँगला, मैथिली, पंजाबी और गुजराती कविताओं के अनुवाद भी हैं। बाँगला आदि भाषाओं के गीत उनके मूल स्वरों में गाये जा सकते हैं। अन्त में कुछ नोट और पादानुक्रम (Concordance) भी दिये गये हैं।

यहाँ मैं हिन्दी कविता (और साहित्य की) भाषा, देवनागरी लिपि एवम् कविता में उपयुक्त छन्दों पर कुछ विचार प्रस्तुत करना चाहता हूँ।

कविता को सामान्य पाठकों तक पहुँचाना आज के युग की एक बड़ी आवश्यकता है। इसके लिए शीघ्र ही कुछ करना चाहिए। कवि-लेखकों की एक शिकायत है कि सामान्य पाठक साहित्य में रुचि नहीं रखते और कविता को तो बिलकुल पसन्द नहीं करते। दूसरी ओर सामान्य पाठक का यह कहना है कि साहित्य और कविता की भाषाशैली ही कुछ ऐसी है कि उनकी समझ में कुछ भी नहीं आता। वैसे भी कविता हमेशा कुछ अंश में तो टेढ़े ढंग से बात करती है, तभी तो वह कविता कहलाती है। फिर भी पाठक और कवि के बीच का अन्तर पाटने की आवश्यकता तो है ही। मैं यह मानता हूँ कि साहित्य और विशेषतया कविता की भाषा

R Dave

सरल, लोकगम्य और भाषा के अपने शब्दों अर्थात् तद्भव शब्दों से युक्त होनी चाहिए। और यह भी सहज और स्वाभाविक ढंग से होनी चाहिए, प्रयत्नज नहीं। (वैसे तो आज भाषाविज्ञान की दृष्टि से तत्सम और तद्भव के वर्गीकरण पर स्वतंत्र रूप से विचार किया जा सकता है, परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से यहाँ हम इस वर्गीकरण का स्वीकार करते हैं।) हिन्दी के शब्द-भण्डार (Lexicon) में जो तत्सम शब्द घुलमिल गये हैं उनका प्रयोग तो हमें करना ही है। तब भी यह ध्यान में रखना है कि भाषा की पूँजी तद्भव शब्द होते हैं। प्रारंभ में ऐसी रचनाएँ अच्छी या शिष्ट नहीं लगेंगी, किन्तु शनैः शनैः भाषा की शक्ति में वृद्धि होगी। तद्भव शब्द भाषा की अभिव्यक्ति-शक्ति को (Expression Power) को बढ़ाते हैं और उसे सोना बनाते हैं। साहित्य की भाषा यदि लोकभाषा के निकट नहीं जा सकी तो साहित्य और बोलचाल की भाषा की दो धाराएँ अलग अलग चलेंगी। वैसे दोनों धाराओं में कुछ अन्तर तो रहेगा ही। तभी तो कुछ सदियों के बाद नई भाषा का 'जन्म' होता है। इसके बावजूद भी यह अन्तर हम जितना कम कर सकें, अच्छा है। यहाँ मैं इस बात का स्वीकार करता हूँ कि इस दिशा में मैंने विशेष प्रगति नहीं की है।

भाषा और भाषाविज्ञान की नई खोजों से आज हमें यह जानने को मिला है कि संस्कृत की गठन से हिन्दी की (और गुजराती की भी) गठन भिन्न है। संस्कृत समास-प्रधान भाषा है। हिन्दी वैसी संश्लिष्ट नहीं है। हिन्दी व्याकरण का रूप भी संस्कृत व्याकरण से भिन्न है। हिन्दी अक्षर का स्वरूप भी बदल गया है। हिन्दी अक्षर का एक उदाहरण देखिए: संस्कृत में <u>राम</u> शब्द दो अक्षरों का है। हिन्दी में देवनागरी लिपि में तो वह दो अक्षरों का ही है, पर बोलचाल की भाषा में वह एक अक्षर का है: <u>राम्</u>। संस्कृत में विभक्ति-प्रत्ययों का उपयोग होता है, जब कि हिन्दी में

R Dave

परसर्गों का (Postpositions)। संस्कृत की वर्णिक कविताओं को तुकान्त होने की आवश्यकता नहीं है, जब कि हिन्दी में तुकान्त की आवश्यकता है। कदाचित् इन सब कारणों से संस्कृत के अक्षरमेल या वर्णिक छन्दों में हिन्दी (गुजराती) में काव्य-रचना में कठिनाई होती है। देवनागरी लिपि अक्षरप्रधान है। हिन्दी-गुजराती में लिपि (लिखित भाषा) और बोलचाल की भाषा में थोड़ी असंगति उत्पन्न हुई है। पर कविता पढ़ने वाला तो फिर भी उसको reading practice के कारण ठीक ही पढ़ जाता है। यह उदाहरण देखिए:

उपेन्द्रवज्रा

संस्कृत : त्वमेव माता च पिता त्वमेव। (प्रपन्नगीता)
हिन्दी : बड़ा कि छोटा कुछ काम कीजै। (मैथिलीशरण)

संस्कृत श्लोक जैसे लिखा जाता है वैसे ही बोला जाता है। और लिखी हुई रचना जैसी है वैसी ही पढ़ने के अभ्यास के कारण हिन्दी कविता भी पढ़ने वाला वैसी ही पढ़ जाता है। परन्तु उसकी अपनी बोली में तो <u>कुछ</u> की जगह कुछ् है, और <u>काम</u> की जगह काम् है। "बड़ा या छोटा कुछ् काम् कीजै।"

संस्कृत कविता में अधिकतर वर्णिक छन्दों का प्रयोग होता था। ये संस्कृत की प्रकृति के बिलकुल अनुकूल थे। प्राकृत-अपभ्रंश काल के प्रारंभ में तो वर्णिक छन्दों में रचनाएँ हुईं, किन्तु बाद में मात्रिक छन्दों का प्रचलन बढ़ गया और वे कदाचित् प्राकृत-अपभ्रंश की प्रकृति के अनुकूल थे। दोहा, सोरठा, कुण्डलिया, चौपाई और कवित्त इत्यादि अनेक छन्द प्राकृत और अपभ्रंश में आये। इनकी लय वाले छन्द संस्कृत में नहीं मिलते। जिन्हें हम 'पुरानी हिन्दी' कहते हैं उसकी दो मुख्य धाराओं में अर्थात् व्रज एवम् अवधी में भी इन छन्दों में रचनाएँ होती थीं। (आज तो

RDave

भाषाविज्ञान और व्याकरण की खोजों के कारण व्रज, अवधी, और बिहार तथा राजस्थान की भाषाएँ हिन्दी की बोलियाँ नहीं, पर स्वतंत्र भाषाएँ मानी जाती हैं।) खड़ी बोली हिन्दी को अभी ~~डेढ़ सौ~~ दो सौ वर्ष हुए हैं। इसके कवियों ने भी मात्रिक छन्द अपनाये, पर साथ ही वर्णिक छन्दों में भी कविताएँ कीं।

संस्कृत में लघु-गुरु विपर्यय की छूट सामान्यतया नहीं दी गई है। हाँ, कभी कभी आवश्यकतानुसार अन्तिम लघु को गुरु मान ~~लि~~ लिया जाता है। केदार भट्ट के वृत्तरत्नाकर और गंगादास ~~की~~ की छन्दोमञ्जरी के अनुसार ~~चरणान्त में~~ वसन्ततिलका, इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा जैसे छन्दों के चरणान्त में (प्रथम और तृतीय पाद के चरणान्त में) में लघु-गुरु का विपर्यय हो सकता है। प्राकृत और अपभ्रंश में वर्ण-विपर्यय और मात्रा-विपर्यय की छूट है। अधिकतर तो मात्रा-विपर्यय होता है। हिन्दी के आधुनिक काल में द्विवेदी युग तक वर्णिक वृत्तों में रचनाएँ होती थीं, किन्तु ~~क~~ उनमें कवियों को विशेष सफलता न मिलने के कारण छायावाद तक आते आते उनका चलन बन्द-सा हो गया।

जब हम काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में एम.ए. के छात्र थे तब हमारे प्राध्यापक हमको यह कहते थे कि संस्कृत के छन्द गुजराती कविता के अनुकूल हैं, पर हिन्दी कविता के अनुकूल नहीं हैं। वास्तव में देखा जाय तो दोनों भाषाओं की कविता के अनुकूल संस्कृत के छन्द नहीं हैं। वर्षों से गुजराती में मात्रा-विपर्यय करने की छूट दी गई है। ~~और~~ और ऊपर के परिच्छेद के अनुसार परिमित वर्ण-विपर्यय भी किया जाता है। ~~परन्तु~~ मात्रा-विपर्यय को दोष नहीं माना जाता। वर्ण-विपर्यय की छूट नहीं है। कहा जाता है कि इससे कर्ण-कटुता आ जाती है ~~।~~ और वर्ण-विपर्यय काव्य-दोष बन जाता है। परन्तु मात्रा-विपर्यय से भी कर्ण-कटुता तो आ सकती है। मुझे तो ऐसा लगता है कि यदि हिन्दी-गुजराती में

RDave

वर्णवृत्तों में कविता करनी हो तो किसी भी छन्द में वर्ण-विपर्यय की छूट देनी चाहिए। मैं संस्कृत के वर्णवृत्तों में कदाचित् ही कविता लिखता हूँ, पर इस ग्रन्थ में एक-दो कविताएँ वर्णवृत्तों में भी हैं। मैंने लघु-गुरु के नियमों का पालन नहीं किया है। इस दृष्टि से इसे काव्य-दोष माना जा सकता है।

यहाँ यह सब लिखने का कारण हिन्दी के अपने छन्दों की आवश्यकता की ओर आदरपूर्वक संकेत करना है। यदि संस्कृत के वर्णवृत्तों में रचनाएँ करनी हैं तो वर्ण-विपर्यय और मात्रा-विपर्यय की छूट के विषय में सोचना होगा। और इसका यति पर क्या असर होता है यह भी देखना होगा। वर्णवृत्तों में रचनाएँ करने से कविता की भाषा में तत्सम शब्दों की भरमार हो जाने की शक्यता की जाँच भी करनी होगी। किन्तु रचनाएँ हो सकती हैं और विरोध भी हो सकता है। जब इन्द्रवज्रा और इन्द्रवंश के प्रथम गुरु के स्थान पर किसी ने एक लघु का प्रयोग करके क्रमशः उपेन्द्रवज्रा और वंशस्थ की रचना की होगी तब ऊहापोह तो हुआ ही होगा।

हिन्दी के अपने छन्दों के लिए हमें खड़ी बोली हिन्दी के लोकगीतों को भी देखना होगा।

हिन्दी के नये मात्रिक छन्दों की दिशा में किये गये एक प्रयोग से मैं अवगत हूँ: प्रो. हरिशंकर 'आदेश' ने अपने '<u>शकुन्तला</u>' प्रबन्ध-काव्य में (१९९६) लगभग १६ नये छन्द बनाकर उनका प्रयोग किया है। इस संबंध में अधिक जानकारी नहीं है।

मैं पिंगलशास्त्री नहीं हूँ। अपनी कविताएँ करते समय मेरे मन में कुछ प्रश्न उपस्थित हुए। उनके निराकरण के लिए मैंने जो कुछ पढ़ा उसके आधार पर अपने विचार यहाँ मैंने व्यक्त किये हैं।

(4)

कविता-लेखन में शब्दों का चयन, उपयोग और आयोजन, पद-विन्यास, वाक्यविन्यास, छन्द-योजना और व्याकरण के नियमों का सख्त पालन को Poetic Diction कहते हैं। कविता का डिक्शन 'शिष्ट' पांडित्य-पूर्ण और कभी कभी जटिल होता है। इसके विपरीत कुछ कवि डिक्शन के नियमों पर ध्यान न दे कर काव्य-रचना करते हैं। इनकी भाषा बोलचाल की भाषा के निकट होती है और बोलचाल की भाषा व्याकरण के नियमानुसार नहीं चलती। इनकी कविता छन्द-मुक्त भी होती है। इसे free verse में लिखी कविता कह सकते हैं। ये कवि ~~गद्य~~ गद्य में भी कविता (Prose Poem) करते हैं। इन कवियों की कविता में तत्सम शब्दों का स्थान कम होता है और पूरा 'डिक्शन' मुक्त ढंग से चलता है। हाँ, 'कवित्व' तो होना ही चाहिए।

अब Diaspora पर कुछ विचार। डायस्पोरा शब्द का उपयोग सामान्यतया विदेश में बसने वाले (भारतीय-डायस्पोरा) साहित्यकारों के लिए प्रयुक्त होता है। अब तो यह शब्द रूढ़ हो गया है। पश्चिम के विद्वानों ने हमें अनेक नये शब्द देने की कृपा की है, और हमने उनको सहर्ष ग्रहण किया है। यहाँ इस शब्द का मूल अर्थ बताने की आवश्यकता न होने पर भी उसका अर्थ-संकेत कर रहा हूँ: (1). बेबिलोन में निष्कासित यहूदी लोग। बाद में कोई भी यहूदी। (2).

Diaspora शब्द का ~~डि~~ डिक्शनरी में दिया गया अर्थ छोड़कर हम अपना मनमाना अर्थ नहीं ले सकते। Internationally तो वही अर्थ है जो ~~शब्द~~ शब्दकोश में दिया गया है।

R Dave

~~यहूदी~~। (२) इसी प्रकार का कोई भी यहूदी-ख्रिस्तान (Jew-Christian).

हम भारतवासी न निष्कासित हैं, न विस्थापित। फिर भी, बेशक, किसी भी शब्द को अपने वांछित अर्थ में ~~किया~~ लिया जा सकता है। मैं इस शब्द का अथवा "विदेश-निवासी भारतीय" शब्द-प्रयोग के लिए उत्साही इस लिए ~~कह~~ नहीं हूँ कि आगे चलकर डायास्पोराओं का अलग गुट या अलग ज्ञाति बनाई जाने की संभावना का डर है। ~~यह~~ ये साहित्य या कविता की प्रधान धाराएँ न होकर गौण धाराएँ भी मानी जा सकती हैं। वर्तमान और भावी साहित्यिक संदर्भों के लिए और साहित्य के इतिहासों में भी इनका अलग स्थान हो सकता है।

नया युग, नई धरा, नई धारा कविता-संग्रह तैयार करने में अनेक मित्रों और स्नेही-संबंधियों का प्रोत्साहन और सहकार मिला है। कुछ नाम ये हैं: ओस्वेगो (न्यु योर्क) के सद्गत डॉक्टर दंपति ब्रिगेडियर जनरल रवीन्द्र और मंजुला शाह, मेरे सहाध्यायी और उज्जैन के प्राध्यापक शिव सहाय पाठक, सागर (म.प्र.) के सद्गत प्रो. प्रेमशंकर, सद्गत श्री. विष्णु प्रभाकर, ~~इथाका के मित्र-दंपति डॉ. शंकर सेन और माला सेन~~, और मेरे परिवार-जन: कुसुम, अनिल, ~~और~~ ~~सुमिता~~ और ज्योति। कॅनेडा के लन्दन-निवासी कवि नवतेज भारती और सुश्री कवि सुरीन्दर भारती का भी सक्रिय सहयोग मिला है। सुरीन्दर जी ने अपनी कविताओं के अनुवाद-प्रकाशन की सम्मति भी दी है। धन्यवाद।

इस संग्रह की कविताओं में और संग्रह की भूमिका में जो भी कमियाँ हों उनके लिए मैं उत्तरदायी हूँ। ~~और जो भी~~

अन्त में मैं अपने संस्कृत और हिन्दी के अध्यापकों का धन्यवाद करता हूँ : सर्वश्री पी.एम. मोदी और रतिलाल शास्त्री (संस्कृत : भावनगर); आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, आचार्य चंद्रबलि पांडेय (हिन्दी : काशी) और आचार्य नंददुलारे वाजपेयी (हिन्दी : सागर). यह संग्रह उनको समर्पित है।

मेरे मातापिता श्री. चमनभैराम और काशीबहन को भी यह संग्रह श्रद्धांजलि के रूप में समर्पित करता हूँ। और भी उन सबको जिन्होंने अपने तईं प्रत्येक प्रकार से मेरी सहायता की है।

मेरी पत्नी कुसुम और पुत्र अभिकान्त की सहायता के बिना मैं यह कवितालेखन और पांडुलिपि तैयार नहीं कर सकता था। ये मेरे अपने ही हैं, अतः उनको मेरा स्नेह समर्पित करता हूँ।

अपनी बयानी को मैं स्वर्गीय 'अज्ञेय' जी के शब्दों में अन्त करता हूँ ;

यों मैं कवि हूँ, आधुनिक हूँ, नया हूँ
काव्यत्व की खोज में कहां नहीं गया हूँ ?
चाहता हूँ आप मुझे
एक एक शब्द पर सराहते हुए पढ़ें
पर प्रतिमा तो -- अरे, वह तो
जैसी आपको रुचे, आप स्वयं गढ़ें !

राधेकान्त दवे
112 Park Lane
Ithaca, NY 14850. (U.S.A.)
email : mikura333@gmail.com

Reave

अनुक्रम

क्रमांक शीर्षक पृष्ठ

Rbave

अनुक्रम

Rsave

अनुक्रम

अनुक्रम

Rbave

अनुक्रम

RDave.

अनुक्रम

R.Dave

अनुक्रम

क्रमांक	शीर्षक	पृष्ठ
१२१.	जीवनसाथी के प्रति	~~१९८~~ १९७
१२२.	यादों के बन्धन	~~१९९~~ १९८
१२३.	शुभ दिन	~~२००~~ १९९
१२४.	मेधा	~~२०२~~ २०१
१२५.	आकृति	~~२०५~~ २०४
१२६.	अमेरिकन इन्डियन	~~२०८~~ २०७
१२७.	यह माटी	~~२१०~~ २०८
१२८.	पति और पौधा	~~२११~~ २०९
१२९.	हिरनी	~~२१२~~ २१०
१३०.	बसन्त का पैगाम	~~२१३~~ २११
१३१.	चाँद आसमानी	~~२१४~~ २१२
१३२.	मेरा परिचय	~~२१५~~ २१३
१३३.	निदाघ	~~२१६~~ २१४
१३४.	क्षितिज पर	~~२१८~~ २१६
१३५.	पत्नी के प्रति सम्बोधि-गान	~~२२०~~ २१८
१३६.	अरूप	~~२२१~~ २१९
१३७.	मन की द्विधा	~~२२२~~ २२०
१३८.	दिनपाँखी	~~२२३~~ २२१
१३९.	बज़ुरंग	~~२२४~~ २२२
१४०.	पहुनियाँ	~~२२५~~ २२३
१४१.	विरह में आत्मैक्य	~~२२७~~ २२५
१४२.	वर्षा में विरहिणी राधा	~~२२८~~ २२६
१४३.	अन्तिम प्रार्थना	~~२२९~~ २२७
१४४.	कसूँभिया रंग	~~२३०~~ २२८

RDave

अनुक्रम

हिन्दी कविताएँ

R.Dave

सृष्टि

घूमने को आकाश चला था !
धूप-छाँह परिधान किये था
कपाल-कुंकुम-तिलक किये था
रक्तिम, स्वर्णिम स्वप्न लिये था।
घूमने को आकाश चला था !

देखी तभी अचानक उसने
नवल नवेली नारी, जिसने
~~श्याम-धूस~~ श्याम-धूसरित देहलता पर
हरिताम्बर परिधान किया था।
घूमने को आकाश चला था !

विश्वसुंदरी सजधज करती
पल पल पर परिवर्तन करती
अंतरिक्ष का प्रांगण भरती
धरती ने अभिसार किया था।
घूमने को आकाश चला था !

1

धरा देख, मुस्काया अंबर
गगन देख हरषाई धरती
धनता से अवकाश मिला था
कविता से रसराज मिला था।
घूमने को आकाश चला था !

बीत गया था एक ज़माना
जाने क्यों दिल हुआ वीराना

RDave

स्मृति

मिलने को मन मचल रहा था
अब बाती को स्नेह मिला था।
घूमने को आकाश चला था!

मधुर मधुर मुस्काई धरती
शरमाई, सरसाई धरती
रस उसने उँडेल दिया था
परिमल से एक प्यार मिला था।
घूमने को आकाश चला था!

नयन-नयन ने यों देखा था
वसुधा की लज्जा-लाली पर
आकाशी स्मित बिखर रहा था
रज का कण कण विहँस रहा था।
घूमने को आकाश चला था!

दोनों का हो मिलन चुका था
2 धरिणी को एक वेग मिला था
नूतन हो अवतीर्ण चुका था
पहला यों परिवार पला था।
घूमने को आकाश चला था!

[illegible]. १९५६.

RDave

साँझ

साँझ सलोनी बेला।
बिदा हुआ तटिनी-तट का लहरों का वह चल मेला!
साँझ सलोनी बेला।

नदिया में मछिया-सी नैया तिरती, सरकती, बहती
नैया में पंछिया-सी लुगैया फिरती, रुकती, तकती
सजीव बने सपने जिसके, क्या उसे अवेला-वेला?
पैठ लगाई गहरे पानी, वह क्या कभी अकेला?
शाम सुहानी बेला
साँझ सलोनी बेला

अंग-अंग की जागृत उन्मादी सुषुप्ति में अब परिणमती
दिन के जीवन की सुवर्णिमा शांत श्यामली को चूमती
दिनकर मौन ढला, चँदा ने फूल खिला कर बेला
तिमिर-तेज युग कहते हैं, सब चलाचली का खेला
संध्या सुंदरतम बेला
साँझ सलोनी बेला

3

[२.] दिसंबर, १९५६.

Rdave.

वेदना का गान

वेदना का गीत गाऊँ आज मैं उल्लास से
मुखरित बनें, प्रमुदित बनें, यह विश्व आज हुलास से
कल्लोल की कारुण्य-धारा में खुशी बहती सदा
मेरी बसंत-बहार पतझड़-पीत-केशों में सदा !

चाँद था परिपूर्ण, पूनों थी गगनरानी बनी
मधुमास के मृदु हास से तारक बिखेरे चाँदनी
कलहंस चुगता स्वर्ग-गंगा में मधुर ~~मुक्ताफली~~ मुक्ताफली
जब श्वान दौड़ा, भोली हिरनी भाग उससे दूर चली
विहरे यहाँ नभनाव में गुरुदेव गरिमा से यदा
तब एक थी घन श्याम की भी हृदय में संगत बदा
यह चाँद, पूनम, चाँदनी, तारा, न जाने थे कहाँ !
मेरी बसंत-बहार पतझड़-पीत-केशों में सदा !

जब अस्त होता चाँद, फीका शुभ्र अंबर पीत था
चाँदनी के हास का जब ह्रास में परिणाम था
टूटी पड़ी नवतारिका, नभ-टोकरे में जो छिपी
4 मानस सूखा, कलहंस उड़ा, श्वान ने हिरनी गही
अमरावती में ज्ञान देने को बृहस्पति भी चला
तब शुक्र एक अडिग निश्चल गौरवान्वित हो अड़ा
यह देख उषा स्तब्ध थी, रवि भी ठिठकता-सा खड़ा !
मेरी बसंत-बहार पतझड़-पीत-केशों में सदा !

[3]. नवंबर, १९५६.

बोध : <u>कलहंस</u> = आकाश में दिखता हंस; <u>स्वर्ग-गंगा</u> = आकाशगंगा;
<u>श्वान</u> = व्याध; <u>हिरनी</u> = मृगशीर्ष; <u>नभ-नाव</u> = पुनर्वसु; <u>गुरुदेव</u> = गुरु;
<u>मानस</u> = आकाशगंगा, मन; <u>नवतारिका</u> = उल्का ।

रेखा और रंग

[स्वर्गीय बहन रेखा के लिए]

रेखा चित्र बनाती थी
दुबली, पतली, क्षीणदेहिनी
रेखा चित्र बनाती थी।

चाहा था उसने मन ही मन
इसकी मैं तस्वीर उतारूँ
विहँस रहा है यहाँ बैठा जो,
नकशी उसकी महीन उतारूँ
पल पल, नवनव, चेतन, उन्मन
जीवन-चित्र बनाती थी।
रेखा चित्र बनाती थी।

देख अचानक रूढ़ि गई, हाँ!
मुग्धमना, यह स्वप्निल नयना
स्वर्ण-प्रात की अरुण-वदना
सीमा-बंधन से स्वतंत्र हो
अंतर के रसभाव-युक्त हो
कलम-कसब दिखलाती थी!
रेखा चित्र बनाती थी।

चित्र अभी बनना था, पर
रेखा की गति को बंद मिले
हाय! किसीकी बाह्य शांति पर
भीतर के अरमान जले!
कोशिश सब बेकार गई
कुटिल रूढ़ि मुस्काई थी!
रेखा चित्र बनाती थी।

RDave

रेखा और रंग

कोई न उसके संग रहेगा?
इतने में, लो! रंग आ गया
रेखा पर छा गया, लग गया!
चित्र बड़ा यों सूक्ष्म बन गया
सीमा सीमा पर जा बैठी
प्राचीनता प्रगति करती थी।
रेखा चित्र बनाती थी।

रेखा खुद ही रंग बन गई
सुषमा ही साकार बन गई
सीमा स्वयं विकास बन गई
रूढ़ि ही सुर-ताल बन गई
मधुर छवि अब उठती थी।
रेखा चित्र बनाती थी।

रेखा चित्र बनाती थी
हृष्ट-पुष्ट औ' सप्तरंगिनी
6 रेखा चित्र बनाती थी!

[8]. १९५६.

RDave

पछतावा

हार को जीत समझ बैठी
प्रीतम की अनुकूल प्रीत निर्बल की रीत समझ बैठी

रूठ-रीस बल खाती थी मैं
मुरझाती किन्तु मन ही मन
अकड़ा कर थे ऐंठ गये वे
रह जाते मसोस अपना मन
कटुता छोड़ उन्होंने आके मुझे मनाना चाहा
अधरों पर स्मित-रेख रही
कंजूस मैं, उनका उदार मन भीतर भीत समझ बैठी
हार को जीत समझ बैठी

आ आ कर रुक जाते थे वे
भँवर चढ़ा लेती थी मैं
जा जा कर मुड़ आते थे वे
नयन फेर लेती थी मैं
अपराधों को भूल, उन्होंने अपनाना मुझको चाहा
7 बाँहें खुलके फैल रहीं
निर्बल मैं, सविवेक शक्ति को दुर्बल-भक्ति समझ बैठी
हार को जीत समझ बैठी

अपनी कमी गिनाते थे वे
क्षम्य सगर्व बनाती थी मैं
निज गुण सदा छिपाते थे वे
सद्‌गुण-शून्य समझती थी मैं

RDave

पछतावा

उद्धतता भूल, उनने मेरी गगरी को भरना चाहा
मानस-गंगा बही रही
जड़ मैं, उनकी बसंत-सुषमा पतझर-गीत समझ बैठी
हार को जीत समझ बैठी

समानता अपनाते थे वे
ऊँची उड़ान भरती थी मैं
नासमझी से नासमझ रहे
निजको चतुर समझती थी मैं
जड़ता भूल उन्होंने ऊष्मा मुझको देना चाहा
दीप की बाती जली रही
मृत मैं, उस चैतन्य स्निग्ध ~~की~~ को मृण्मय गीत समझ बैठी
हार को जीत समझ बैठी

प्रणय-पत्रिका लिखते थे वे
फाड़ फेंक देती ~~मैं~~ थी मैं
स्नेहसिक्त मधु वाणी रटते
४ ज़हर घोल देती ~~मैं~~ थी मैं
विवाद, आग्रह, छोड़ उन्होंने संधि करना चाहा
मंजुल मुरली गूँज रही
जन्तु मैं, उनके विशद को कीचड़-कीर समझ बैठी
हार को जीत समझ बैठी

प्रेम-मीमांसा पूछ रहे वे
मीमांसक बन बैठी ~~मैं~~ ~~थी~~ मैं

R.Dave

पछतावा

चातक-निष्ठा गुनते थे वे
दानी मेघ समझती ~~मैं~~ थी मैं
द्वैत मूल, मन के अनन्य को एक रूप करना चाहा
भाव-सुगंधी फैल रही
धिक्! तज मैं परिणीत प्रेम, ~~मैं~~ पर को मनमीत समझ बैठी
हार को जीत समझ बैठी

मानव के पीछे चलते वे
दानव से खिंच जाती ~~मैं~~ थी मैं
जीवन का नवनीत दे रहे
कूड़े से मन भरती ~~मैं~~ थी मैं
हाय! गमन में भी जीवन-पथ मुझे दिखाना था चाहा
सिकता में पद-रेख रही
मानवता के मनस-पुत्र को अब मन-क्रीत समझ बैठी
हार को जीत समझ बैठी

[५]. 1959

9

RDane

पूणें की मूला-मूठा नदी से

इतनी सुंदर लगती हो तुम
तुम्हारे पास कभी बैठ सका न मैं पलभर भी
जी भर के तुमको देख सका न मैं छनभर भी,
और कभी बैठा भी,
जी उचरा उचरा रहता है
जाने को घर,
अर्ध-जीव आता हूँ जो!
आधा मन रहता है उलझा
अपनी ही चिन्ताओं में,
सुखदुख के ताने-बाने में,
अपने ही बन्धन-मुक्ति में,
अपनी ही जगती के,
जैसे मकड़ी!
भँवर खुद ही डुबाता है अपने को!

x x x

इतनी सुन्दर लगती हो तुम
बिन आये नहीं रहा जाता तुम्हारे पास।
10 ऐसा होता है मन में मेरे,
चहकता फिरूँ इन पंछियों की तरह
तुम्हारे जलाकाश में,
उड़ानें भरता रहूँ इन मछलियों की तरह
तुम्हारी जलगोद में,
करता रहूँ कल-कल नाद इन किनारों की तरह
तुम्हारे जल-स्वर में।

Rdave

पूणें की मूला-मूठा नदी से

किन्तु हाय रे मानव-जीवन!
फँसा ~~रह~~ ही रहता है अपने जीवन-जाल में!
आता -- तो भी जाने को मन
लाता -- तो भी आधा ही मन
कहता -- तो भी अपना ही सुख
गाता -- तो भी अपना ही दुःख

× × ×

इतना दिव्य गाती हो तुम!
संमोहक सुरीला ~~गाती~~ गूँजती हो तुम
मधुर मधुर मुस्काती हो तुम
हल्की-सी बतियाती हो तुम!

यहाँ तो गान ही नहीं
अमृत की प्यास भी नहीं
जीवन की मुस्कान नहीं;
विषमय है जो मन!
गान तुम्हारे झेल सका न मैं अपने जी में पलभर भी
11 गान तुम्हारे कर सका न मैं प्रतिध्वनित छनभर भी।

× × ×

इतनी रूपसि हो तुम!
रूप की क्या गाथा गाऊँ ~~मैं~~!
लावण्य के क्या महल बनाऊँ ~~मैं~~!
तुम्हारे रूप के ~~का~~ आवर्तनशील आस्फालन को जल
इतना है पक्का,

RDave

पूना की मूला-मूठा नदी से

कि मन मेरा मोम का मीन हो जाता है।

जब मछुए को देखता हूँ अपना जाल बिछाते हुए
तुम पर,
(गोया वह तुमको पकड़ना चाहता है,
मछली को नहीं)
तो मन मेरा दौड़ जाता है जहाँ,
जल उठता है
ईर्ष्या से,
हाँ!
मन-ही-मन मुझे लगता है,
जैसे मैं तुम्हें चाहने लगा हूँ
जैसे मैं तुम्हें चाहता हूँ।
कितना विषम है यह प्रेम,
कितना असमान!

× × ×

इतनी समर्पित लगती हो तुम,
गुणों की क्या गाथा गाऊँ!
12 उपकारों के क्या महल बनाऊँ!
तुमने तो किया आत्म-विसर्जन
जन-कल्याण हेतु,
पर कर न सका मैं स्वार्थ-विसर्जन पलभर भी!
तुमने तो बहाया,
पर बहा सका न मैं अपने अहं को छनभर भी!
तुमने तो दिया जीवन,
पर कर सका न मैं आत्म-दान दमभर भी!

[६]. 1964.

RDave

हम

हम मछली हैं!
जो कि
हड्डी के काँटे में अपनी ही,
गला फँसा कर अपना ही,
तड़प रही है
अपने ही स्वाद के बंधन में।
माछीमार ख़ुद मछली!
फँसी हुई ज़िंदगी।
पड़ी है किनारे पर ख़ून से लथपथ
श्वास-हीन क्षण में!

हम मकड़ी हैं!
जो कि
इर्दगिर्द बुनती है अपने ही
चिकनाहट का जाल अपनी ही।
फँसती ख़ुद ही धागों में
अपने ही सुखदुःख के।
शिकारी ख़ुद शिकार!
छटपटाती बेबसी!
13 लटकती अवकाश में शून्य, चेतन-हीन
मृत्युमय पल में!

हम तृष्णामृग हैं!
जो कि
चल-जल रचके अपना ही

R.Dave

हम (2)

भागता पीछे छल के अपने ही,
भटक रहा हूँ
खोज में अपने आप की ही!
आशा का मधु खेल!
पानी स्वयं पियासा!
हाँफ़ती मौत!
पड़ा ज़मीं पर, तप्त, श्रान्त, अशान्त
घन-तम-मय विप्लव में!

हम मछली हैं!
हम मकड़ी हैं!
हम तृष्णामृग हैं!

[७]. नवम्बर, १९६८.

14

Redone

उलझन

थक गया मन मेरा
गोधूलि के झुरमुटे में दीप न है अँधेरा
थक गया मन मेरा

ना अशान्त, आक्रान्त नहीं वह
राह भूला, दुर्भ्रान्त नहीं वह
लघु हो कर पाना विराट को,
तब भी हाँ! उद्‌भ्रान्त नहीं वह
जाने कौन-सी मोह-माया ने आज किया है बसेरा!
थक गया मन मेरा

साथ चला संसार है सारा
गूँज रहा इक गीत है न्यारा
लीलाहेतु प्राण है प्यारा
मस्ती का मधुमय इशारा
आज अचानक कौन-सा कोना हो रहा है अकेला!
थक गया मन मेरा

[८]. जुन, १९६१.

15

RDave

कहाँ, करोगी क्या तुम?

कहाँ, करोगी क्या तुम?
पहाड़ है, उसके पत्थर का महा कठोर हृदय है
उससे फूटता और मचलता छोटा सोता अभय है
सोते का पानी मीठा है, शीतल, पावनकारी
मंजुल स्मित है हल्का मुख पर, मौन-मुखर संगीत है
अरूप इक सोते को खारे सागर में मैं रख दूँ तो,
कहाँ करोगी क्या तुम?

उपवन है, उसकी युगों की ~~कर~~चार लौह-दीवारें हैं
उसमें खिलती परसवेल, पर हिमकण की बौछारें हैं
मेघधनु के रंग मिले हैं, दैवी अनुभूति की तरंग
पारसमणियाँ छिपी हुई हैं परसलता के प्रेम-उछंग
सूक्ष्म एक मणि को ले कर लोहे को जंग लगे छू दूँ तो,
कहाँ, करोगी क्या तुम?

युग है, उसकी गुफा एक अभिराम अजीब बनी है
अवगत मूल्यों के बंधन में ~~युगात्मा~~ आत्मा बँधी हुई है
पाश काटकर हर युग के, जो चिरकालिक नूतन है
पलता है वह उसी गुफा में नवयुग का सुन्दर है
नया एक जग को मैं दूँ 'गर सुंदर नवयुग का पूरक तो,
कहाँ, करोगी क्या तुम?

16

[९]. जून, १९६२.

PDave

मन की माया

मन की माया का विस्तार
ईश्वर पर अध्यासित करके
क्यों उसको दुखियाते हो?

यह तो नहीं कहा है उसने, 'मैं हूँ, मेरी भक्ति करो
धूपदीप, नैवेद्य धरो, मेरी पूजा, गुणगान करो।'
यह भी नहीं कहा है उसने, 'मेरा पल पल स्मरण करो
खफ़ा होऊँगा वरना तुम पर, हरदम मुझसे डरा करो।'
क्षति, निर्बलता का साकार
मन पर तुम अध्यासित करके
क्यों ईश को ~~जन्माते~~ जन्माते हो?

यह तो नहीं कहा है उसने, 'ये मेरे पयगम्बर हैं
स्तुति-भक्ति जो करते उनकी, वे मेरे प्रिय होते हैं।'
यह भी नहीं कहा है उसने, 'जो ना भक्त, न आस्तिक हो
धर्मगुरु को जो ना मानें, उनको मत इन्सान कहो।'
अपनी श्रद्धा का अँधार
बुद्धि पर अध्यासित करके
क्यों उसको भरमाते हो?

17 यह तो नहीं कहा है उसने, 'यही धर्म है, यह अधरम
जो बनता बन्दी उसका, वह धर्मभीरु, उसके सुकरम।'
यह भी नहीं कहा है उसने, 'नीति-अनीति यह-वह है
जीवन के चिर सत्य मूल्य ये, और शेष संभ्रान्ति है।'
कल-क्षेत्र का जर्जर संसार
नूतन पर अध्यासित करके
क्यों उसको कुम्हलाते हो?

RDave

मन की माया

यह तो नहीं कहा है उसने, 'युग को बदल नहीं सकते
जीवन के चिर नीति, धर्म, मूल्यों को ढूँढ़ नहीं सकते।'
यह भी नहीं कहा है उसने, 'मुझको छोड़ नहीं सकते
मेरे बिन जीवन-मृत्यु का चिर तुम ढूँढ़ नहीं सकते।'

इस-उस युग का बंधन-भार
शाश्वत पर अध्यासित करके
क्यों उसको बिनसाते हो?

मन की माया का विस्तार
ईश्वर पर अध्यासित करके
क्यों उसको दुखियाते हो?

[२०]. जून, १९६१.

18

RDave

छाया और प्रकाश

एक बार प्रकाश ने कर लिया कैद परछाँई को। लगा दीं पाबन्दियाँ चारों ओर। कहने लगा, मैं गोरा, तुम काली। मैं तेजस्वी, तुम श्री-हीन। यह समझ रखो कि रंगभेद ~~और~~ और जातिभेद से छाँहों का छुटकारा नहीं। ~~मैं~~ मैं प्रकाश, प्रकाश ही रहूँगा। तुम छाया, अँधकार की जाति की, छाया ही रहोगी, और मेरा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकोगी। छाया कुछ न बोली, चुप रही।

धीमे धीमे करवट बदली धरती ने। प्रकाश को भागना पड़ा। अप्रत्याशित! छाया फैलने लगी। जहाँ जहाँ प्रकाश जाता, छाया वहाँ पहुँच जाती! संपूर्ण प्रकाश को उसने अपने आक्रोश में ले लिया। आमूल क्रान्ति! रक्त-हीन!

[३३]. १९८५.

19

RDave

उलाहना

अरे दुग्धहीन स्तन!
लाज नहीं आती क्या तुमको
इस तरह
खुले आम
लटकते हुए पड़े रहने में
(देख रही हैं सब आँखें तुमको)
किसी निर्वीर्य प्राणी की तरह,
जब कि पड़ा है बच्चा बगल में तुम्हारी,
तुम्हारे दूध के लिए चिल्लाता?

कल तक भरे हुए थे तुम
और आज खाली!
अंत नहीं है तुम्हारी पाप-लीला का!
मानता हूँ,
तुम अति सुंदर हो,
अपनी मालकिन की तरह,
जिसके सीने पर चढ़े बैठे हो तुम
और तुम्हारा जोड़ीदार!
मानता हूँ,
काले होते हुए भी
सुपात्र थे तुम मसले जाने के लिए कभी,
लेकिन इससे क्या?
भर सकोगे तुम ~~अपने को~~ अपने को दूध से
फिर एक बार?
और भर सकोगे तुम उस पेट को,

R.Dave

उलाहना

जो बैठा है तुम्हारे नीचे?
भर सकोगे क्या पेट उस बच्चे का,
जो पटक रहा है अपना सिर जमीन पर?

ओ अफ्रीका के स्तन!
ओ भारतमाता के स्तन!
ओ धरतीमाता के स्तन!
क्यों खाली पड़े हो इस तरह
लटकते हुए
खुले आम?
भर जाओ न फिर एक बार तुम
प्रेम और मानवता के दूध से,
ताकि पा सके दूध
यह रोता हुआ, छोटा-सा मानव-बच्चा!

[१२]. सितंबर, १९८५.

21

Rdave

उत्तर-पूर्वीय अमरिका के वन-प्रदेश में शरद्

तुम प्रकृति हो,
तुम मुक्त हो।
तुम यहाँ की,
इसी वन-प्रदेश की वाशिंदा हो
तुम्हें अपने साथ ले जा कर क्या करें?
तुम्हें यहीं छोड़ जाते हैं!

बैठी हो अपना सुंदर मायाजाल फैलाती हुई,
और बैठी हो इस विराट प्रांगण को भूषित करती हुई
इन परिपूर्ण पत्तों के अनुपम लावण्य से!
जी चाहता है,
तुम्हें यहाँ से ले चलें अपने साथ,
बाँध कर तुम्हें अपने स्वरों में
अपनी तूलिकाओं में
अपने कैमेरों और कैमकॉर्डरों में
अपने शब्दों में।
परन्तु नहीं।
तुम प्रकृति हो
तुम मुक्त हो
बन्दिनी नहीं हो सकती तुम किसी की,
22 जैसे सरस्वती!
तुम्हें यहीं छोड़ जाते हैं।

तुम यहाँ की हो
इस धरती की गोद में पली हो तुम
इस पृथ्वी पर।

RDave

उत्तर-पूर्वीय अमरिका के वनप्रदेश में शरद्

~~और~~ इस नील गगन के क्षितिज पर
एवम् उससे भी परे,
एक ~~लघ~~ लघु रजकण से ले कर
विराट नीहारिका और पूरा ब्रह्मांड
या सैंकड़ों ब्रह्मांडों से भरा हुआ
महाब्रह्मांड है घर तुम्हारा!
फिर भी रहती हो इस पृथ्वी पर!
यहीं तुम सोती-उठती हो
सपने सजाती हो
रंगों को सँवारती हो।
यहीं होता है तुम्हारा नर्तन-गान,
लास्य-तांडव!
यहीं है बसेरा तुम्हारा
अपने समस्त सिमटाव-बिखराव में।
असंभव है तुम्हें बाँधना,
स्थूल उपकरणों में, प्रिये!
सर्वतंत्रस्वतंत्र हो तुम,
विश्व की उन्मुक्तवासिनी!
तुम प्रकृति हो
23 तुम मुक्त हो
तुम्हें यहीं छोड़ जाते हैं।

[१३].[१४]. अक्तूबर, १९८५.

RDave

पत्रोपनिषद्

तुम शरद् हो, पतझड़ हो तुम
तुम पतझड़ हो, वीरान हो तुम
तुम वीरान हो, रंगीन हो तुम
कौन कर सकता है वर्णन
तुम जैसी अनुपम रूपकोशा का?
तुम-सी त्रिगुणातीत लावण्यमयी का?
अब इस पत्ते को ही लो न!
तुम्हारे दिल के तारों से गूँथा गया यह पत्ता,
पत्ते के तार-तार मेघधनु के रंगों से रंजित,
जिसको बनाने में लगाये हैं तुमने
सैंकड़ों कार्य-क्षण!
निकाल कर इस पत्ते को अपने दिल से
अपनी नक़्शीदारी की निशानी के रूप में
रख दिया है पेड़ से ज़मीन पर तुमने

याद है न तुम्हें
जो घटा था उपनिषदों के समय में?
एक अज्ञात तत्त्व का अचानक आगमन,
देवताओं का सलज्ज गर्वखण्डन,
भरी इन्द्रसभा में!
उसी इतिहास का दुहराना ~~मानो~~ मानो पतझड़ के इस पर्णोत्सव में,
एक अज्ञात पत्ते का अचानक आगमन,
जीवमात्र का सलज्ज गर्वखण्डन
भरी विश्व-सभा में!
जो भी आया इस पत्ते के पास,

RDome

पत्रोपनिषद्

कवि हो या आर्षद्रष्टा
मनुष्य हो या देवतात्मा,
अवाक् हो गया था इस अज्ञेय तत्त्व को देखकर
निर्निमेष!
जो आये, स्तब्ध!
कौन है यह पत्ता?
कौन है इस पत्ते के पीछे?
यह पत्ता --
फूट रही हैं रंगों की चिनगारियाँ
जिसके तन-बदन से,
निकल रही है उग्र तेज-धारा
जिसके अंग अंग से,
रचती हुई प्रकाश का एक प्रभा-मण्डल-सा!
और इतने सारे पत्ते!
ये सब,
जैसे हैं तुम्हारे लेखरूप,
कर रहे हैं और सबको अपरूप!
इतनी सारी पत्र-सृष्टि
इतनी सारी रंग-सृष्टि
25 इतनी सारी तेज-सृष्टि
इतनी सारी लेख-सृष्टि!

[१४]. अक्तूबर, ~~[illegible]~~ १९८५.

नोट: यहाँ संदर्भ केनोपनिषद् का है।

RDave

एक कबीर नहीं बना सकते?

रह रह कर पूछता हूँ तुमसे,
इतना बनाते रहते हो तुम,
इतना बनाते रहते हैं हम,
एक कबीर ही नहीं बना सकते?

पूछता हूँ लोगों से मैं,
जो हैं महान वैज्ञानिक
आविष्कारक,
नूतन तत्वों के निर्माता।
पूछता हूँ मैं उनसे,
जो हैं बड़े कारखानेदार
उद्योगपति
उत्पादक।
पूछता हूँ मैं उनसे,
जो हैं शास्त्र-विशारद
धर्म-विधायक,
नीति-उन्नायक।
पूछता हूँ मैं उनसे,
जो हैं क्रान्ति-विधायक
26 आमूल परिवर्तन के संवाहक।
पूछता हूँ मैं उनसे भी,
जो हैं बड़े कवि
क्रान्तदृष्टा
अपनी सृष्टि के आप विधाता
नूतन सृष्टि के वैतालिक।

R.Dave

एक कबीर नहीं बना सकते?

इतना बनाते रहते हो तुम
एक कबीर ही नहीं बना सकते?

पूछता हूँ लोगों के ईश्वर से मैं,
जो कहलाता विश्व-विधायक
पाप-विमोचक
पुण्योद्धारक
नीति-धर्म का ~~चिर~~ चिर संरक्षक
विश्व के अणु अणु का
सर्जक, उन्नायक, संहारक।
इतना बनाते रहते हो तुम
इतना बना सकते हो तुम
मुझको बनाया
जग को भी बनाया, और
स्वयं को भी,
तब एक कबीर ही नहीं बना सकते?
यदि नहीं,
तो बंद करो अपना यह कारखाना
विश्वोत्पादन का
27 और बदल लो अपना नाम
अथवा कर लो आत्महत्या!

रह रह कर पूछता हूँ मैं तुम सबसे,
इतना बनाते रहते हो तुम
एक कबीर ही नहीं बना सकते?

[१५]. [२६]. ~~मार्च~~ नवंबर, १९८५.

Rdave

अणुबम की मनोव्यथा

आज यकायक
हो क्या रहा है मुझे?
यह दर्द कैसा?
~~कैसे~~ जैसे पेट विलोड़ित हो रहा है!
काँप रहा हूँ मैं,
समझ में नहीं आता, क्यों?
कलेजा छलनी हो जाता है
एक शूल-सा उठता है सीने में,
जैसे विगलित हो रहा हूँ मैं,
भँवर उठ रहा है
पेट से अंत तक,
दिल से दिमाग तक,
समझ में नहीं आता, क्यों?
इतनी बार गिरा हूँ जग पर
आज यह असमंजस क्यों?

लगता है
बेहोश हो जाऊँगा
गिर पड़ूँगा।
28 लगता है,
छाती फट जाएगी
रज रज जल जाऊँगा।
चाहता हूँ टूट पड़ूँ मैं विश्व पर
विस्फोट बन कर,
समझ में नहीं आता, क्यों?

R.Dave

अणुबम की मनोव्यथा

सोचता हूँ :
गिरना ही है जब किसी जगह मुझे
होना ही है जब नष्ट मुझे
मिटाना ही है जब निजको मुझे,
क्यों न गिरूँ अपने बनाने वालों पर ?
क्यों न मिटा दूँ अपने बनानेवालों को ?
उन राजनीतिक नेताओं को ?
उन विनाशकारी वैज्ञानिकों को ?

[१६]. नवँबर, १९८५.

29

R.Dave

मेरे अतीत की मृत्यु

१.

दूर सुदूर
देखता हूँ अपना अतीत,
बढ़ रहा है मंथर गति से
वर्तमान की ओर।
और देखता हूँ,
अचानक ही,
लुढ़क पड़ा राहमें ~~कह~~ ही वह,
हो गई अकाल मृत्यु उसकी
पहुँचने से पहले ही
वर्तमान में।

पहुँचाना था मुझे उसको भविष्य तक
वर्तमान को पार करके,
~~और~~ भावी के भी उस पार,
और करना था उसको कालमुक्त!
त्रिकालातीत!
बेचारा अतीत!
अफ़सोस!

30

2.

अचानक कौंध गई एक बिजली-सी
मेरे मनमें,
कहीं मैं ही तो नहीं मेरा अतीत?
यह निस्तब्ध स्थिति...
यह जड़ दशा...

Retype

मेरे अतीत की मृत्यु

सदियों से बैठा हूँ एक ही आसन लगाकर,
एक ही दिशा में ताकती-सी स्थिर आँखें!
कहीं कोई छू दे हल्का-सा,
मुर्दे की तरह लुढ़क जाये मेरा शरीर
इस ढलान के नीचे।
शायद मैं ही हूँ मेरा अतीत,
मरा हुआ!
जिसे पहुँचा न पाया भविष्य तक,
आरपार हो कर वर्तमान के!
जिसे पहुँचा न पाया मैं भविष्य के उस पार,
कालमुक्ति से कालमुक्ति की ओर!
शायद उसी की लाश को ढो रहा हूँ मैं
अपने कंधों पर!

३.

तब तो शायद कत्ल कर डाला अपने
वर्तमान को भी मैंने!
बूढ़ा अतीत गया,
जवान वर्तमान भी चल बसा।
31 क्या हुआ मेरे नवजात शिशु भविष्य का?
आह्वान करके देखता हूँ अश्विनीकुमारों का,
एक चम्मच आशा, विश्वास और दृढ़ निश्चय के
च्यवनप्राश का,
और जी उठेंगे फिर से तीनों कदाचित्!
मेरा अतीत, मेरा वर्तमान, और मेरा भविष्य!

[१८]. जुलाई, १९८६.

RDave

अमरिकन भाई से

भाई रे, अमरिकन मेरे !
साम्यवाद से डरते हो तुम,
ठीक है न ?
हाँ ?
डरना तो मैं समझता हूँ,
पर दूर भागना नहीं समझा,
नहीं समझा धिक्कार तुम्हारा ।
तुम कहते हो,
साम्यवाद शत्रु मानव का,
पूँजीवाद तब फिर क्या है ?
साम्यवादी भी हैं तो कोरा मानव,
जैसे हम-तुम ।

मुकाबला करने को तुमको साम्यवाद का
रहना होगा साम्यवाद के साथ,
और बदलना होगा उसको,
यदि तुम सच्चे हो अमेरिकन,
भाई रे, अमरिकन मेरे !

32 अवैधता से क्या होगा, जी ?
अवैध जितना, उतना, भाई !
मनमें भूत पनपता रहेगा
साम्यवाद का !
बन्धु ! सुनो, जी !
तुम्हें रचाना होगा अमरिका में सच्चा लोकतंत्र

बन जाओ तुम मुझ-सा मानवतावादी,
और बने रहो मानव !
मानवप्रेमी हैं हम, बन्दे!
शत्रु किसीके नहीं हो सकते,
भाई रे अमरिकन मेरे !

[१८]. ~~[१९]~~ अक्तूबर, १९८६.

33

हमने भी दो कोर्स लिए थे, डाक्टरेट जब करते थे,
भारत में भी हो आये संशोधन को, पा कर सम्मान।
दिग्दिगन्त फैली है शान।
हम हैं हिन्दी के विद्वान।

बोल न पायें इससे क्या? पढ़ भी तुम लेते ही हो,
गठन तुम्हारी भाषा की है बन्द मुट्ठी में हमरी आन।
करते सबको विद्यादान।
हम हैं हिन्दी के विद्वान।

काम पड़ा 'गर हमें तुम्हारा, लिखवाना कुछ अपना नाम,
हमारे ~~हमारे~~ घर आ के कर दोगे, युग युग से तुम रहे गुलाम।
किताब पर भी हमारा नाम।
हम हैं हिन्दी के विद्वान।

3५ फ़र्क़ बड़ा है तुममें, अमेरिकन छात्रों में, क्या जानो?
भेद कहीं कुछ तो करना है, समान फिर भी कुछ असमान।
अच्छी तरह से लो यह जान।
हम हैं हिन्दी के विद्वान।

अनिवार्य हम, जैसे प्राण।
हम हैं हिन्दी के विद्वान।

क्यों न दौड़ें पीछे हमारी भारत के दिग्गज विद्वान?
हमीं बुलाते उन्हें किसी प्रिंस दिलवा के डॉलर का दान!
मत रहना इससे अनजान!
हम हैं हिन्दी के विद्वान!

[१९].
[२०]. नवंबर, १९८६.

35

Rdave

मृत्युसूक्त - १

हे मृत्यु देवता!
हम तुम्हारा आवाहन करते हैं
तुम आओ!
धन्य होंगे हम तुम्हें पा कर
कृतार्थ होंगे
तुम आओ!

वादा करते हैं,
निराश नहीं होना पड़ेगा तुम्हें,
लौटना नहीं पड़ेगा खाली हाथ तुम्हें
हमारे दर से।
जैसे भी बनेगा,
दे देंगे तुमको सबकुछ हमारा।
वचन है,
प्राप्य होगा यज्ञभाग तुम्हारा तुमको।
बैठे हैं तुम्हारी प्रतीक्षा में
सदियों से
उत्सुक।
हे मृत्यु-देवता!
हम तुम्हारा आवाहन करते हैं,
36 तुम आओ!

[20], फेब्रुआरी, ~~१९७५~~ १९८६.

RDave

मृत्यु-सूक्त --2

मौत!
तुम हम पर सदा प्रसन्न रहो!
जाने क्यों
सदा नाराज रहा है यह जीवन हमसे
सदा रहा है लड़ता-झगड़ता यह हमसे,
हमारा अपना होने पर भी!
फिर भी कोई शिकायत नहीं की हमने।
मूढ़ बालक यह जीवन!
मचलता रहता आजीवन!
किन्तु कभी न होगा झगड़ा हमारा तुमसे
हे सन्धि-विग्राहक!
मौत!
तुम हम पर सदा प्रसन्न रहो!

मौत!
बहुत बड़ा संग्राम लड़कर आये हैं हम
तुम तक,
खाये हैं थपेड़े जीवन के हाथों
अब तक!
लाश हो गये हैं थक थक कर,
हारे नहीं हैं मगर,
सुलाओ अब अपने अंक में तुम हमें
पुचकार कर
दुलार कर!
हे निर्वाण-दूत!

37

RDave

मृत्यु-सूक्त -- 2

जागरण रहा जीवन भर
उनींदे हैं लोचन
प्यार से सुला दो लोरी गा कर मधुर।
हे जगज्जननि!
सदा वरद हस्त रहे तुम्हारा हम पर
हो जायें हमारे तन-मन तुम मय।
हे चिर-शान्ति-दूत!
तुम हम पर सदा प्रसन्न रहो!
मौत!
तुम हम पर सदा प्रसन्न रहो!

मौत!
कुलदेवि है जीव-मात्र की!
स्तुति करते हैं हम तुम्हारी
आराधना
उपासना
या देवी सर्वभूतेषु मृत्युरूपेण संस्थिता!
तुम हो मृत्यु हमारी!
तुम ही महामृत्युञ्जय मंत्र!
तुम ही मृतसंजीवनी कवच!
38 हमारी रक्षा करो जीवन से,
मौत!
तुम हम पर सदा प्रसन्न रहो!

[29]. १५-८६.

R Dave

मृत्यु-सूक्त -- ३

भावी के गर्भ से आने वाली ओ मेरी नवजात मित्र!
अतीत और वर्तमान के ताने-बाने से बुनी हुई
मेरे जीवन की नक़्शीदार कालीन पर
अपने पाँव रखने ~~वाली~~ वाली ओ मेरी प्रिय मित्र!
मेरा यह प्रथम नमन ~~स्वी~~ स्वीकार करो।

नहीं जानता, कहाँ से आ रही हो तुम
नहीं पूछता, कहाँ ले जा रही हो तुम
नहीं सोचता, किस धाम में बसती हो तुम।
जानता हूँ, मेरा कल्याण निहित है ~~तुम~~ तुममें
जानता हूँ मेरा जीवन परिपूर्ण है तुममें
अक्षय मधुपर्क का संचय करने वाली हे मेरी उर्वी मित्र!
मेरा यह प्रथम अर्घ्य स्वीकार करो

नहीं जानता, तुम मृत्यु ही हो या जीवन भी
नहीं पूछता, तुम बन्धन हो या मुक्ति भी
नहीं सोचता, तुम कराल हो या करुणा भी।
जानता हूँ, मेरा अंतिम विकास है तुममें ही
जानता हूँ, मेरी परम सत्ता है तुममें ही
39 पुष्प-पुष्प से पराग चुनने वाली ओ मेरी भ्रमर मित्र!
मेरा यह प्रथम प्रणय स्वीकार करो

भावी के गर्भ से अमर संदेश लाने वाली ओ मेरी परम मित्र!
मेरी यह प्रथम भावना स्वीकार करो
भावी के ~~गर्भ~~ गर्भ से मधुवर्षा करने वाली ओ मेरी उदार मित्र!
मेरा यह प्रथम समर्पण स्वीकार करो

[22].
[~~23~~]. जनवरी, १९८९.

RDave

मन की बात

मन की बात बताता हूँ मैं
युग युग तक चुप रहा, आज
जन-जन का नाद सुनाता हूँ मैं
मन की बात बताता हूँ मैं

ठहरो, जी!
यह कहाँ ले चले सारे का
सारा ही तुम आकाश बटोर कर,
झोली में अपनी तुम भर कर
फरी?
अरे! यह कैसा दावा?
कहते हो कि,
पहुँचे तुम सबसे पहले गगनांचल
पर, विराट के पंख लगा कर।
किन्तु,
किसके पंख कुचल कर, और,
बता दो, किस किस को
धोखा दे दे कर?
और समझ लो।
परिश्रम के सीकर से सिंचित
40 हैं ये गगन-पुष्प सब हमारे,
चाँद, सितारे, सूरज, पृथ्वी,
नीहारिकाएँ, कण कण उडुगन
हम सबके ये स्वप्न रँगीले!
हटो यहाँ से!

RDave

मन की बात

सच कहता हूँ,
खाली करो झोली शांति से।
एक फूल मैं चुन के रहूँगा
एक सितारा ले के रहूँगा
एक स्वप्न सच करके रहूँगा,
और भले कुछ भी हो जाये,
एक-एक चुन कर सुरभित, ये
पुष्प, गगन के हीरे, सच्चे स्वप्न
सभी को दे के रहूँगा।

चाहे हो तुम साम्यवादी या
पूंजीवादी, मानव— या मानवतावादी
ईश्वर — या जनतंत्रवादी।
सुन लो बन्धु! कान खोल कर,
जन-शोषण हो नहीं सकेगा अब से,
तुमको आत्म-विसर्जन करना होगा!

कवि हूँ, कवि!
मैं क्रान्तदर्शी हूँ
मा नवीन क्रान्ति सिखलाता हूँ मैं
शान्त स्वरों में लड़ता हूँ मैं
युग युग से चुप रहा, आज
जन-जन का ~~[illegible]~~ साद सुनाता हूँ मैं
मन की बात बताता हूँ मैं!

[22]. [~~26~~]. मई, १९८६.

(62)

Rbare

देवी-स्तोत्र

कपड़े बदलो, माँ!
अच्छे नहीं लगते तुम पर ये वस्त्र
शोभा नहीं देते।
तुम समझती हो कि,
सुंदर लगते हैं ये तुम्हारे सुंदर अंगों पर,
जाज्वल्यमान
जरी-किनखाब-मंडित
चमकीले, भड़कीले!
तुम समझती हो, माँ! कि
देते हैं ये तुम्हें सुछवि
उच्चता
आभिजात्य!
नहीं माँ! नहीं
बहुत कुरूप लगती हो,
अत्यंत भद्दी
बेडौल!
बहकाया है भक्तों ने तुमको
सर्वसुन्दरी कह कर
देवी कह कर
42 जगन्माता कह कर!
तुम समझती हो कि,
देवी लगती हो तुम
आँखों को चकाचौंध कर देने वाले
इन कपड़ों में!
तुम्हारी समृद्धि के उद्घोषक
इन कपड़ों में!

R.Dave

देवीस्तोत्र

नहीं माँ! नहीं!
बहुत कुरूप लगती हो
अत्यंत भद्दी!

तुम्हारे बच्चों को देखो, माँ!
फटेहाल!
चीथड़े कपड़े!
लाज नहीं आती इन्हें देखकर तुमको?
देखो, ताक रहे हैं जैसे उनके अंग
तुम्हारी तरफ़
दीनता से।
क्या ढँकने नहीं चाहिए ये अंग तुम्हें, माँ?
यदि ढँक न सको तो,
क्या पहन भी नहीं सकती तुम
उनके-से कपड़े, माँ?
अगर नहीं तो,
उतार दो अपने कपड़े, माँ!
कपड़े बदलो, माँ!
वादा करो कि,
43 जब तक कपड़े न मिलें
तुम्हारे इन बच्चों को,
तुम भी रहोगी चीथड़ों में!
कपड़े बदलो, माँ!

[२४]. सितंबर, १९८८.

(६३)

Rdave

जीवन की लय

टूट गई जीवन की लय
आज हमारी मधु साधना
पलभर में हो गई विलय
टूट गई जीवन की लय

ताल बराबर बजता था
तोड़ा भी उस्तादी था
परन परन पर चलता था
फिर भी क्यों कर चूकती रहती
इतनी सुगम सरल यह लय?
टूट गई जीवन की लय

राग मधुमय गुंजन था
मध्यम लय आलापन था
गमक, मूर्च्छना-कंपन था
हुई तभी क्यों संवादी की
विसंवादी में रह रह लय?
टूट गई जीवन की लय

44

[२५]
[२६], अगस्त, १९८८.

R.Dave

समान अवसर देने वाले मालिक का गीत

मालिक हूँ, मालिक मैं।
सबको समान अवसर देता हूँ
जो भी हो अधिकारी पद का
नियुक्त उसको करता हूँ

जब भी कोई जगह पड़े यदि खाली
योग्य व्यक्ति की करता हूँ रखवाली
अपना, अपनों का, या अपने दोस्तों का
जाना-माना; वही योग्य कहलाता!
फिर देता हूँ सभी जगह विज्ञापन
इन्टरव्यू के नियमों का भी पालन!
चुनता हूँ फिर अपना बन्धु
नाटक अच्छा रचता हूँ!
समान अवसर देता हूँ

कभी कभी यह भी है करना पड़ता
छिप छिप आसन भी है देना पड़ता!
अगर योग्यतम हो कोई, विज्ञापन क्यों?
चुपके से कर लो सब कुछ, ढिंढोरा क्यों?
45 पिछले दरवाजे से अंदर करता हूँ
कल-परसों फिर सबको सब बतलाता हूँ
सबके मुँह चुप रहते हैं।
काम व्यवस्थित करता हूँ
समान अवसर देता हूँ

कभी कभी तैयार किसीको करना

समान अवसर देनेवाले मालिक का गीत

अपने गुरु का देख समर्थन करना
तालीम दे कर इन्टरव्यु में बुलाना
फिर सबमें से उसको ही चुन लेना
नियम-मात्र का पालन मैं करता हूँ
कानून से सब संचालन करता हूँ
प्रमोशनों में यही करता हूँ
भेदभाव नहीं करता हूँ
समान अवसर देता हूँ

[२५]. ~~[२७]~~ अक्तूबर, १९८८.

46

RDave

षण्मुगम्

अगर रोना है तो षण्मुगम् के लिए रोओ
हाँ, षण्मुगम् के लिए !

कितने महायुद्ध लड़े हैं षण्मुगम् ने
कितनी लड़ाइयाँ लड़ा है यह षण्मुगम्
कितनी बार जिया है षण्मुगम्
कितनी बार मरा है यह षण्मुगम्
कितनी बार पाये हैं महावीर चक्र षण्मुगम् ने
कितनी बार पाये हैं परमवीर चक्र इस षण्मुगम् ने !
अगर रोना है तो षण्मुगम् के लिए रोओ
हाँ, षण्मुगम् के लिए !

षण्मुगम् तब भी लड़ा, जब भारत पराधीन था
षण्मुगम् तब भी लड़ा, जब भारत दो हुआ था
षण्मुगम् लड़ के ही रहा, जब बांगलादेश बना था
षण्मुगम् लड़ के ही रहा, जब त्रासवादी घुस आया था
षण्मुगम् खड़ा रहा सदा सीना तान कर
षण्मुगम् खाता रहा सदा गोलियाँ बड़ी शान से
अगर रोना है तो षण्मुगम् के लिए रोओ
47 हाँ, षण्मुगम् के लिए !

विश्वयुद्ध शुरू हुआ कि वहाँ पहुँचा ही है षण्मुगम्
कोरिया में षण्मुगम्, और वियतनाम में भी षण्मुगम्
दक्षिण अफ्रीका में भी षण्मुगम्, सूडान में भी षण्मुगम्
इराक में भी षण्मुगम्, पनामा में भी षण्मुगम्

RDave

षण्मुगम्

विश्व का एकमात्र वीर षण्मुगम्
अन्याय का एकमात्र प्रतिकारक षण्मुगम्
अगर रोना है तो षण्मुगम् के लिए रोओ
हाँ, षण्मुगम् के लिए!

हिन्दी-तमिल की राजनीति में ~~क~~ फँसा है षण्मुगम्
हिन्दी-उर्दू के भँवर में भाँवरें भरता है षण्मुगम्
फ्रेंच-फ्लेमिश के दलदल में फँसा है षण्मुगम्
स्पेनिश-अंग्रेजी के चक्रवात में उड़ता है षण्मुगम्
भाषाओं की भूरि धारा में बहता है षण्मुगम्
~~सब~~ सबको समझाता, तिरता-डूबता है षण्मुगम्
अगर रोना है तो षण्मुगम् के लिए रोओ
हाँ, षण्मुगम् के लिए!

हिरोशिमा में बम पड़ा कि पहुँच गया षण्मुगम् वहाँ
धमाका हुआ नागासाकी में, हाज़िर हुआ षण्मुगम् वहाँ
षण्मुगम् पहले मरा, जब कुर्दों पर गैस फेंका गया
षण्मुगम् पहले मरा, जब वियतनाम में गैस फेंका गया
जब जब जहाँ जहाँ जंतुयुद्ध हुआ
48 षण्मुगम् ही पहले शहीद हुआ
अगर रोना है तो षण्मुगम् के लिए रोओ
हाँ, षण्मुगम् के लिए!

नारी जब निर्वस्त्र की गई थी, वस्त्र लेकर कौन पहुँचा था?
अत्याचार हुए असहायों पर, जान ~~कर~~ की बाज़ी कौन खेला था?

R. Dave

षण्मुगम्

बच्चे जब बेचे गये, ~~किसकी~~ किसकी चीख़ से गगन गूँज उठा था ?
दरिद्रा जब घर घर भटकी, किसने उसका हाथ थामा था ?
समानता का शंखनाद किया, तो षण्मुगम् ने
स्वस्थ समाज की घोषणा की, तो षण्मुगम् ने
अगर रोना है तो षण्मुगम् के लिए रोओ
हाँ, षण्मुगम् के लिए !

षण्मुगम् सदा लड़ा आफ्रो-अमरिकनों के न्याय के लिए
वह सदा जूझा अमरिका के मूल निवासियों के लिए
षण्मुगम् लड़ा दलितों के लिए, कभी पददलितों के लिए
वह सदा जूझा शोषितों के लिए, अभाव-ग्रस्तों के लिए
ज़िन्दादिल षण्मुगम् ! सब को नवचेतन दिया
आत्म-बलिदानी षण्मुगम् ! सब को नवजीवन दिया
अगर रोना है तो षण्मुगम् के लिए रोओ
हाँ, षण्मुगम् के लिए !

[२७]. [~~२८~~]. अगस्त, १९९०.

49

षण्मुगम् रोएगा

षण्मुगम् रोएगा।
षण्मुगम् बिल्कुल रोएगा!
जब षण्मुगम् रोएगा
उसका रोना नहीं रुकेगा।
षण्मुगम् रोएगा।

सदियों से रोता आया है यह षण्मुगम्
अपने लिए
अपने परिवार के लिए
अपने परिवेश के लिए,
लेकिन कभी न रोया वह दूसरों के लिए,
स्वार्थी जो ठहरा!
मगर, अब के षण्मुगम् रोएगा
बिल्कुल रोएगा
और कस कर रोएगा,
दूसरों के लिए भी।
षण्मुगम् रोएगा।

कुछ लोग हैं,
जिनको मालूम ही नहीं
50 कि उनके पास है आँसुओं का खज़ाना।
कुछ और लोग हैं,
जिनके आँसू पहुँच ही नहीं पाते
उनके हृदय से आँखों तक!
कुछ ऐसे भी तो हैं,
जिनका हृदय सूख गया है सतही तौर पर

[illegible]

षण्मुगम् रोएगा

पर भीतर पड़ा है एक आर्द्र उत्स!
षण्मुगम् उनके लिए भी रोएगा
षण्मुगम् उनको भी रुलाएगा
षण्मुगम् उनको भी रोना सिखलाएगा।

काँप उठेगा त्रिलोक उनके महाक्रन्दन से
त्राहि त्राहि कर उठेंगे चौदह लोक उनके रौद्र रुदन से
नष्ट हो जाएँगे विश्व उनके अश्रुसागर के प्रलय-प्रवाह से!

षण्मुगम् रोएगा
षण्मुगम् कसकर रोएगा
जब षण्मुगम् रोएगा
उसका रोना नहीं रुकेगा।
षण्मुगम् रोएगा।

[२८]. जुलाई, १९९०.

51

R.Dave

जब षण्मुगम् जाएगा

जब षण्मुगम् जाएगा
बरबाद नहीं करेगा कोई अपने आँसू
अरे! मालूम भी नहीं होगा किसीको
जब षण्मुगम् जाएगा।

इसके भी पहले जाते हैं वे
जो कहलाते हैं
बड़े लोग, महापुरुष, राष्ट्रनेता, महायोगी,
पताका फहरा जाते हैं दुनिया में अपनी वे।
लेकिन जब षण्मुगम् जाएगा,
यह नहीं होगा।
स्कूल-कचहरियाँ बंद नहीं होंगी,
मातम नहीं मनाएगा कोई,
दौड़ेगा नहीं उसके जनाज़े के पीछे कोई,
समाचार नहीं छपेगा किसी पत्र के कोने में भी,
आह भी नहीं निकलेगी
उसके अपने परिवार के दिल से भी!
सदा रहेगा षण्मुगम् अनामी!
जब षण्मुगम् जाएगा।

52

लेकिन इससे क्या?
जातियाँ नहीं बनतीं केवल महापुरुषों से
साधारण मनुष्य भी बनाते हैं जातियों को,
और अपना यह षण्मुगम् है एक साधारण मनुष्य!
खुशबू नहीं देता गुलाब ही अपनी पंखुड़ियों को,
पंखुड़ियाँ भी देती हैं खुशबू गुलाब को,
और अपना यह षण्मुगम् है गुलाब की एक पंखुड़ी!

Rbave.

जब षण्मुगम् जाएगा

शान्त कोई संन्यासी जब
तहस-नहस करके चला जाता है
अपनी टूटी-फूटी कुटिया को भी,
हिमालय के किसी ग्लेशियर की चट्टान पर,
मालूम नहीं होता तब किसीको।
मगर तब भी,
पाते हैं सब अनजाने में ही
उसकी मौन साधना की दिव्य ~~सौरभी~~ सौरभ,
जो निखिल के साथ हो गई होती है
एकाकार!
और अपना षण्मुगम् भी है संन्यासी की एक
शान्त समाधि-
निर्विकार।
जब षण्मुगम् जाएगा
कोई नहीं जानेगा,
किन्तु अनुभूति होगी सबको
उसके दिव्य चैतन्य की
~~विद्युत् के~~ विश्व के कण कण में।
जब षण्मुगम् जाएगा।

53

[29]. मार्च १९८८.

RBave

जणुगम नहीं मरा

अच्छा! तो जणुगम् ~~मर नहीं?~~ नहीं मरा!
अद्भुत जिजीविषा है उसमें,! बड़ी प्रबल।
पिछले पल उसका न अता था, न पता
हो गया था संपूर्ण विघटन,
विदीर्ण हो गये थे उसके अणु-परमाणु
जीवन के झंझावात में,
छोड़ दी थी सबने आशा उसके जीवित रहने की।
किन्तु तूफ़ान चला गया,
हुआ मुक्ताकाश,
और देखता हूँ तो,
आ रहा है जणुगम् उधर अपना सिर उठाये हुए!
अरे! तो जणुगम् नहीं मरा!

सर्दी का मौसम!
खूँखार, महाबलि बूढ़ा विन्टर!
मिटा देना चाहता है हरी हरी घास को
पीलिया का रोग लगाकर,
और जणुगम् भी है उस घास का एक तिनका ही!
विषम आँधी,
54 स्नो-ब्लीज़र्ड,
हाहाकार!
घास गई, जणुगम् गया!
शीत गया, आया वसन्त,
अचानक ही,
जाने कहाँ से सर उठा के खड़ा हो गया
हरी घास का तिनका!

RDave

<u>षण्मुगम् नहीं मरा</u>

पीलिया-मुक्त!
जाने कैसे हुआ यह चमत्कार!
तो षण्मुगम् मरा नहीं!
अच्छा?!

[३०]. नवंबर, ~~१९८६~~.१९८६.

55

RDave

नारी

स्वतंत्र हूँ, पर सहमी, सहमी!
समान हूँ, पर सहमी, सहमी!

त्रेता में झाँका, तो सीता खड़ी वहाँ निहार रही है
एकटक; टस से मस होने नहीं देती आदर्शों से है
ढकेल देती है बरबस वह 'आर्यपुत्र' के पीछे पीछे
जाने कहाँ चली जाती है पुरुषों की उफनाती गरमी
स्वतंत्र हूँ, पर सहमी, सहमी

द्वापर में जाऊँ, गांधारी चक्षु पर पट्टी धरती है
बँटी जाने पर भी पांचाली की सती-शिक्षा चलती है
सिखलाती दो युग की हैं सतियाँ मुझको खुद सहती सहती
जाने कहाँ कहाँ से आई पुरुषों की निष्कर्मी नरमी
स्वतंत्र हूँ, पर सहमी, सहमी

जानूँ मैं, अपराध नहीं सीता का, वह युग ऐसा था
यह भी मानूँ, द्वापर भी सतियों का अपना एक समय था
युग बदला, बदले हैं युग के मूल्य, प्राण ना रहे रुढ़ि में
जाने कब तक बना रहेगा समाज यह मानव का जुल्मी
56 स्वतंत्र हूँ, पर सहमी, सहमी

गृहसूत्रों को पढ़ बतलाते, देखो! है यह स्त्री-मर्यादा
धर्मसूत्र पुष्टि करते हैं और कड़ी करके मर्यादा
दोष नहीं उनका, वे थे अपने युग-मूल्यों के ही पोषक
जाने क्यों ये लाद रहे फिर उस युग को हम पर सब मरमी
स्वतंत्र हूँ, पर सहमी, सहमी

Rdave

अपनापन

वह तो मैं नहीं छोड़ सकता
जिससे मैं 'मैं' कहलाता हूँ।
सिवा इसको,
तुम जो जो कहो,
सब छोड़ दूँ।
और यदि सच कहूँ तो,
बचा ही क्या रखा है मैंने अपना?
बचा हूँ केवल मैं!
वह तो मैं नहीं छोड़ सकता
जिससे मैं 'मैं' कहलाता हूँ

तुम तो जानते हो,
छोड़ी नहीं जा सकती इन्सान से
यही एक वस्तु,
जिससे वह 'वह' कहलाता है।
पहचाना जाता है शेर
शेरत्व की अनुभूतिदायक रेखाओं से ही,
और स्यार भी!
बात है प्राण-प्रकृति की,
स्वत्व की।
57 निजत्व अलग, इन्सान अलग!
स्वत्व ~~गई~~ गया, इन्सान गया!
और क्या बचा है मेरे पास मेरा अपना?
बचा हूँ केवल मैं!
वह तो मैं छोड़ नहीं सकता
जिससे मैं 'मैं' कहलाता हूँ

[32]. [31]. मार्च, १९८९.

RDave

ख़ुद का खोना

ख़ुद गया हूँ खो, अरे! इस देश में

आज तक भ्रम में रहा, हूँ मैं सलामत
चौंके कर देखा, न मिलता 'मैं' अचानक
खो गये सारे स्वरूप-लक्षण! अवाचक!
अब करूँ क्या, ढूँढ़ लूँ कैसे कहाँ मैं?
किस तरह बन जाऊँ ~~फिर~~ फिर से मैं वही 'मैं' SP/
ख़ुद गया हूँ खो, अरे! इस देश में

हाँ, गया हूँ भूल निजको इस जगह मैं
आज तक भ्रम में रहा, सब हैं यथा-स्मृत
याद कर देखा, गईं स्मृतियाँ अचानक
ज़िन्दगी के मील के पत्थर अवाचक!
अब तरूँ विस्मरण-सागर किस तरह मैं?
ख़ुद गया हूँ खो, अरे! इस देश में

लुट गया हूँ मैं, अरे! इस देश में
आज तक भ्रम में रहा, सब हैं सुरक्षित
देखता; हैं पार सीमा की अचानक
58 मिट गई लक्ष्मण-सुरेखा, मैं अवाचक!
पाऊँ प्रज्ञा का हरण नहीं रोक अब मैं
ख़ुद गया हूँ खो, अरे! इस देश में

[विशेष नोट देखिए] [33]. ~~[..]~~ मई, १९८९.

RDave

कवि

मेरे हाथ में अक्षर आते, बन जाते वे गहना
मिलता माटी से मन मेरा, बन जाती वह सोना

मैं जादूगर शब्दों का, भाषा का, अर्थों का
जौहरी हूँ मैं ध्वनियों के प्रस्फुरण के हीरों का
भरी सभा में लेता मुजरा बन ~~क~~ मैं कवि-सम्राट
कविता करती नर्तन नूतन अभिनव उसमें आज

मैं कारीगर, ~~क~~ करता नक्शीकाम सूक्ष्म बूंदों का
मयदानव-सा रचता सृष्टि, भगीरथ मैं देवों का
बन के सुर-गांधर्व जीवन के गान नये ~~गाता~~ गाता मैं
धूलि-धूसरित कराल कर्दम काल-छवि धरता मैं

कुटिया को मैं महल बनाता, अपनी छड़ी घुमाता
रजकण को, जो अति अवमानित, सिंहासन बिठलाता
मैं हूँ मुक्त जीवन-मृत्यु से, धर्मों से, ईश्वर से
चिर जीवन पाता जग मेरे संजीवन-स्फुरण से

पल पल नव सृष्टि रचता मैं, शाश्वत, भाग्य-विधाता
५१ स्व-प्रसून मैं, ~~स्व~~ स्वयं ज्योति, अनहद रव का उद्‌गाता
संकल्पों में शुभ्र ~~स्वयं~~ शुचि मैं, शुभ स्वरूप लहराता
विश्वदेव का शुचि रूप हूँ मैं, स्वयं सदा इठलाता

[२०]. जून, १९७९.

RDave

मैं, मन, और मन का मन

एक समय मैं मन के मन से मिला। परस्पर अभिवादन। पूछा: भाई मेरे मन के मन! कहो, कैसे हो? ~~कुशल~~ सकुशल तो हो न? उसने जवाब दिया: हाँ, सब तुम्हारी बदौलत! और तुम कैसे हो? मैंने कहा: वैसे तो सब ठीकठाक है, परन्तु अब, जब कि तुम मिल गये हो, ~~मैं~~ पूछना यह चाहता हूँ कि तरह तरह की ग्रंथियों को लेकर जो मेरा चेतन मन बँधा है, उन्हें वह छोड़ता क्यों नहीं? और तुम ~~उनमें से~~ उनसे छुटकारा दिलाने के बजाय उसमें और ग्रंथियाँ क्यों भर रहे हो?

तब मन का मन हँस पड़ा, पर बोला नहीं कुछ। मैंने फिर से उलाहना-भरे स्वर में कहा: तुम्हें यह समझना चाहिए कि आखिर तुम किसके मन के मन हो और तुम्हें अपनी ये बचकाना हरकतें बंद कर देनी चाहिए।

अब मन का मन बोला: तुम मूढ़ हो। बच्चों की-सी बातें तो तुम कर रहे हो! तुमने थोड़ा-सा भी सोचा होता तो यह समझ जाते कि तुम, तुम्हारा मन और मैं जुदा नहीं, एक ही हैं!

[३५].
[३७]. ~~[२६]~~. नवम्बर, १९९०.

60

RDave

कोकिल

मैं कोकिल हूँ
मैं पंचम स्वर में गाता हूँ
अमराई सारा संसार
कुहुरस-अमी पिलाता हूँ

कभी कभी कौओ आते हैं
कर्कश स्वर में चिल्लाते हैं
ईर्ष्या, द्वेष स्पर्धा से जलते, हैं
मैं तटस्थ ही रहता हूँ

मुकाबला वे क्या कर पाते !
जमात पूरी आती है
चुप रहता मैं, जैसे हारा !
मन ही मन मुसकाता हूँ

थक कर वे उड़ जाते हैं
जब मैं स्वर पर आता हूँ
मस्त, मग्न, इठलाता हूँ, औ,
सब को मस्त बनाता हूँ

61

कभी जीवन के, मृत्यु के, या
विरह-मिलन के स्वर छेड़ूँ
कभी जपता हूँ शान्ति-मंत्र
कभी ऋत-संदेश सुनाता हूँ

मैं कोकिल हूँ

[३६].
[३८]. ~~[illegible]~~. मई, ~~[illegible]~~ .१९९१.

RDave

पत्नी के जन्मदिन पर

जीवन-नंदिनी!
मुबारकबादी नहीं दूँगा तुमको
तुम्हारी सालगिरह पर,
शुभकामनाएँ नहीं भेजूँगा तुमको
तुम्हारी वर्षगाँठ पर,
सिर्फ़ कहूँगा यही कि,
गिरह सालों की होती है,
ऊर्मियों की नहीं;
गाँठें बरसों की होती हैं,
भावनाओं की नहीं!

जीवन में गाँठें होती हैं बरसों की,
जो बाँधती भी हैं,
और मुक्त भी करती हैं
जीवन के अन्त में
स्वयं खुल कर!
तुमको भी ऐसी गाँठों का उपहार मिले
इस शुभ दिन पर।
बरसों की गाँठें जुड़ती जायें,
मन की गाँठें खुलती जायें!

62

स्वैरविहारिणी!
फैलना हो तो खड़ा है नीला आसमान पूरा
तुम्हारे आगे,
लहराना है तो पड़ा है धीर समंदर गहरा
तुम्हारे सामने,

R.Dave

पत्नी के जन्मदिन पर

खिलना है तो खुशबूदार मिला है गुलशन सारा
वसंत-पतझड़ लिए।
आकाश का विस्तार
सागर की गहराई
उपवन की मधुछवि
भर जाये तुम्हारे मानसरोवर में,
जीवन-नंदिनी !

[३१०].
~~९~~ जुलाई, १९९१.

63

R.Dave

एक पत्र

पत्र लिखने की इच्छा हो रही है आज
तीव्र !
एक जवाबी पोस्ट कार्ड
जो पड़ा है ड्राअर में मेरी मेज़ के
सदियों से।
किसको लिखूँ ?
तुम तो जानते हो,
कोई नहीं है मेरा दोस्त
मेरा हमदम, मेरा बंधु-बांधव, मेरी बाँधवी।
तुम तो जानते हो,
कोई नहीं है ऐसा
जो पढ़ सके और समझ सके ख़त मेरा!
ख़ैर! चलो, तुम्हीं को लिख दूँ,
ओ मेरे अज्ञात,
अभिन्न,
अन्तर्यामी वयस्य!

क्या डाक से भेजूँ,
या दे जाऊँ हाथोंहाथ ?
64 तय नहीं कर पाता हूँ!
किन्तु तुमको मिलेगा अवश्य यह पत्र मेरा!
जब मिले,
लिख देना जवाबी पोस्ट कार्ड साथ वाला
शीघ्र ही।

Rdave

एक पत्र

डाक से मत भेजना
हाथोंहाथ ही दे जाना।

जैसे सारी बातें लिख दी हैं मैंने अपनी
इस लम्बे-से खत में,
जैसे खोल के रख दिया है मैंने अपने आपको
दुनिया के सुख-दुःख भूला कर
क्षण भर!
तुम भी वैसा ही करना।
आखिर एक क्षण तो अपना हो
अपनों के साथ!

और पता क्या लिखूं?
कुछ भी नहीं, ठीक?!
पता तो चाहिए सामान्य पत्रों पर!
यह तो पत्र ही ऐसा है,
जिसे पहुंचा सकता है कोई भी डाकिया!
पते के बिना ही!

65 और स्टाम्प भी क्यों लगाना?
हाँ, मुहर लगा दी है मैंने
अपने दिल की!
तुम भी!

[३८].
~~[४०]~~. ~~[२०~~ जुलाई, १९९२.

उत्तर-पूर्वीय अमेरिका में शरद्-ऋ. - २

देखो सखि, यह शरद् मन-भावन!
और साथ में पतझड़ पावन!
परन्तु बाँवरे मेरे ये नयन!
कुछ हो गया है इनको।
जहाँ भी, जो भी, जिसको भी
देखता हूँ,
दिख पड़ता है चित्ररंगी सर्जन!
क्या हो गया है इन नयनों को!
जा कर देखा दर्पण में तो सहम गया,
ये आँखें हैं या रंगबिरंगी पत्तियाँ पतझड़ की?
अपनी ही नहीं,
तुम्हारी,
अपने बच्चों की।
जिनकी भी देखता हूँ,
हैं सब की आँखें ~~सतरंगी~~! सतरंगी!
और देखता हूँ वन-उपवन में तो,
दिखाई पड़ती हैं आँखें ही आँखें!
ताक रहा है जैसे ~~कोई~~ अपनी आँखों से कोई मुसका!
पतझड़ की पत्तियाँ हो गई हैं इन्द्रधनुषी आँखें
66 और आँखें हो गई हैं चित्ररंगी पतझड़ की पत्तियाँ!
¶ — शरद्-सुन्दरी की सुहावनी देहलता इस वनराशि में! — ¶ नया पैराग्राफ
~~देख कर~~ ऐसा लगता है, जैसे
सो रही है वह पत्र-शय्या पर
अपने नींदभरे अलसाये लोचन ले कर!
और खिल उठी है, हे प्रिये!
तुम्हारी रूप-राशि भी शरद् का पारस-स्पर्श पा कर!

RDave

उत्तर-पूर्वी अमरिका में शरद् -२

तुम्हारी अनुपम लावण्य-मयी यह मुखकान्ति!
तुम्हारी तनिक काँपती हुई यह देहयष्टि!
लगता है,
रँग-सी गई हो तुम शरद् के अद्वितीय सौंदर्य से,
या रँग रही हो तुम शरद् को अपने अनिंद्य सौंदर्य से।
जी करता है,
ताकता ही रहूँ तुम दोनों को अनिमेष
सनातन समय तक!
ये अद्भुत सुहावने वृक्ष
ये झड़ने को तत्पर रंग बदलते पत्ते
ये झड़े हुए रंगीन पत्ते!
इन पत्तों की ओढ़नी ओढ़े यह विश्राम-शीला शरद्!
और इन सबके साथ गोष्ठि करती हुई तुम!
मैं समझता था, बूढ़े हो गये हम!
अब क्या रूमानी बनेंगे हम!
पर राग तो जगा सकती है पतझड़ भी!
और बन सकती है वह बसन्त भी!
जी करता है,
अपना सारा प्यार उँडेल कर दे दूँ तुमको
और हो जाऊँ विलीन शरद्-शोभा में लेकर तुमको!

67

अब देखता हूँ घूम कर हमारे बेटे-बेटी को
खेलते हुए इन पत्तों के साथ,
और इन प्यारे प्यारे नन्हें बच्चों को,
खेलते हुए उनके साथ,

Rbave

तो होता है मनमें, जैसे
पतझड़ ही आया है हमारे घर शिशु-रूप लेकर ।
चलो, रख दूँ इन बच्चों को सँभाल कर
अपने जीवन की कोरी किताब में,
-- जैसे ~~कुछ~~ शौक़ीन लोग रखते हैं पतझड़ के पत्तों को! --
ताकि
देख सकूँ मैं इनको भविष्य में
जब भी चाहें तब,
पन्नों को खोल कर बूढ़ेपन में !

अब समझा हूँ मैं मर्म मन्त्र का,
उपनिषद्कार की इस गूढ़ोक्ति का :
पूरे में से पूरा ले लो,
पूरा बचता है !

[३९].
~~[४१]~~. ~~[४०]~~. अक्तूबर, ~~१९९१~~ १९९२.

68

RDayal

श्रीविष्णुसहस्रनाम का संशोधित पाठ

कर लिया है तैयार हमने सहस्रनाम का नया पाठ,
है अधिकांश पुराना यद्यपि मूल रूप में पाठ,
कुछ जोड़ दिया है हमने नया।
कर लिया है ~~हमने~~ तैयार हमने सहस्रनाम का नया पाठ।
हो गये थे आवश्यक कुछ परिवर्तन, भक्तो!
ज़रूरी थे परिवर्द्धन उसमें, प्यारे भक्तो!
कृपया कर लें संशोधन अपनी प्रति में
सविस्तार भेजेंगे हम छपवा कर दो-तीन दिन में।

कुछ मंत्रों का अर्थ तभी बैठेगा,
'अ' उनके आगे जब कोई जोड़ेगा।
दो-तीन मंत्र दिये हैं मिसाल रूप, लिख लें!
श्रीअधर्मकृताय नमः।
श्रीअस्वस्तिकृताय नमः।

नये मंत्र नव पोथी में हैं, कृपया रट लें
अर्थ स्वयं उद्घाटित होगा, कृपया गुन लें
प्राणहर्ता को शतशः नमन!
क्षमाहीन को शतशः नमन!
और भी नये नये मंत्र दिये हैं, भावुक जन जप लें।

69

महामंत्र भी प्राप्त हुए हैं, अवश्य उनको रट लें
आँख मूँद कर हिन्दू बोलें निम्नलिखित यह मंत्र:
श्रीबाबरीध्वंसकाय नमः।
नमाज़ पढ़ते ज़रूर बोलें मुसलमान यह मंत्र:
ईशाल्लाह मंदिर तोड़ेंगे हम यह!

R.Dave

श्रीविष्णुसहस्रनाम का संशोधित पाठ

अब लिखते हैं महिमा
श्रीविष्णुसहस्रनाम जी के नये पाठ की हम।
महामंत्र है यह श्रीविष्णु जी का अकट नाम!
अपरंपार है महिमा उसकी
बखानी नहीं जा सकती।
पहुँच जाता है पाठ करने वाला परम धाम।
जो भी करेगा पाठ केवल एक बार दिन में,
यदि हिन्दू हुआ,
मस्जिदें तोड़ गिरायेगा।
यदि मुस्लीम हुआ,
मंदिर-बुत जमींदोस्त करेगा।
यदि अन्य धर्मी हुआ,
दोनों को खूब लड़ायेगा।

विधर्मियों के जो तोड़े पूजा के जितने स्थान।
निश्चित है, वह जायेगा, जहाँ बसे भगवान॥

[४०]. फरवरी, १९९३.

70

RSave

~~[struck out]~~ होली

होरी खेलन चले आज माँ भारती के लला
भर भर के पिचकारी अपने भाई के लोहू से
कैसे खेल खेलत, देखो! राम-रहीम के लला!
आज माँ भारती के लला

धूम मची है बड़ी देश भारत के प्रांगण में
गोली चलावत है कोई तो कोई खँजर को
भारतमाता का यह बेटा लाल खून में पला
आज माँ भारती के लला

एक जलावत है दूजे को इधर ज्वाल अगन में
कोई फेंकत है किसीको बड़ी कला से गटर में
दुहाई ईश की, रब की ~~देखो~~ कोई ~~कोई~~ देता शख़्स भला
आज माँ भारती के लला

चलो सखि! हम भी खेलें यह नई तरह की होली
कश्मीर से कन्या तक, बहना! जहाँ भी हो, जैसी भी
अबीर-गुलाल को क्या करना, जब ताज़ा ख़ून मिला!
आज माँ भारती के लला

7।

[४२].
~~[४३]~~. मार्च, १९९३.

Rbaye

बर्फ़ की बारिश

बर्फ़ की बारिश होती, अब, देखो मूसलधार, सजनि!
धरती को सिंगार सजाती, देखो मूसलधार, सजनि!

पुष्प-पंखुड़ी-सी ये स्नो की श्वेत श्वेत सुंदर पंखुड़ियाँ
ठूँठ वृक्ष की डाल डाल पर लहराती कोमल पंखुड़ियाँ
पल पल नव नव रूप बदलती, सतरंगी छवि धरती, सजनि!
देखो मूसलधार, सजनि!

नन्हें मुन्ने लेट रहे सुकुमार ऊष्म-शीत स्नो-शय्या पर
घर घर से जन निकल रहे हैं अपनी अपनी स्लेडें ले कर
और किये मुँह नभ की ओर लेते स्नो का आस्वाद, सजनि!
देखो मूसलधार, सजनि!

हँगामा मच रहा चहुँ दिशि, शहर शहर सुख-लहरी, सजनि!
गोया यह स्नो नहीं, परन्तु खुशियों का सागर हो, सजनि!
मची धूम अब डगर डगर, मदमाते बिन मदिरा सब, सजनि!
देखो मूसलधार, सजनि!

[४२].
[४६]. मार्च, १९९३.

72

Revised

सती

अरे! यह कौन रो रहा है चुपके चुपके
छिप कर के
इस काल-रात्रि में
निःशब्द, मौन-मूक
अश्रु-हीन?
अरे, कोई देखो रे!

भारतमाता!
सती हो रही है भारतमाता आज
जल रही है अपनी ही चिता में वह
अपना ही मृत शरीर ले कर!
एक युग था
जब भस्म हो गई थी आग में सती उमा
अपनी ही सुलगाई हुई!
किन्तु था कारण उसका
नहीं माना था शिव का कहना
स्वमान की रक्षा करनी थी
गौरव की रक्षा करनी थी।
पर कोई कारण नहीं सती होने का
भारतमाता के लिए।
73 तब भी सती हो रही है भारतमाता आज
मनुष्य की चिताई हुई दानवी आग में जल कर।
सती हो रही है भारतमाता
आग में जल कर,
लज्जा की, संताप की, प्रतिहिंसा की।

R.Dave

<u>सती</u>

अरे! कोई दौड़ो रे!
कौन शिव अब ताण्डव करेगा?
कौन दक्षों का ध्वंस करेगा?
रो रहे हैं देव-दानव
रो रहा है युग
रो रहे भगवान!

सती हो रही है भारतमाता
निःशब्द, मौन-मूक
अश्रु-हीन,
अरे! कोई दौड़ो रे!

[४३].
~~[४२]~~ मार्च, १९९३.

74

RDave

बर्फ़ से

बर्फ़! तुम धीरे धीरे बरसो
सुनो सयानी सखि!
बर्फ़! तुम धीरे धीरे बरसो
इतनी जल्दी क्या है, सजनि!
शीत का मौसम पूरा पड़ा है
अभी आज कल परसों
री! थोड़ा थोड़ा बरसो
सुनो सयानी सखि!
बर्फ़ तुम धीरे धीरे बरसो

यातायात सभी ठप्प है।
घर में सब ग्रोसरी ख़त्म है
जैसे खड़ा रहा जीवन है
जैसे सोया हुआ समय है
ऐसे में तुम ही क्यों दौड़ो?
इत्मीनान से बैठो, बोलो
हल्के हल्के बरसो
जी! धीरे धीरे बरसो
सुनो सयानी सखि!
75 बर्फ़! तुम धीरे धीरे बरसो

सुदूर की तुम राजकुमारी
जानूँ, तुमको खोज हमारी
इसी लिए करती यायावरी
भटक रही तुम मारी मारी

Rdave

बर्फ़ से

बर्फ़-सुन्दरी! ओ सुकुमारी!
बैन मधुर अब बोलो
चुपके चुपके बरसो
जी! धीरे धीरे बरसो
सुनो सयानी सखि!
बर्फ़! तुम धीरे धीरे बरसो

जान गया 'गर बूढ़ा विन्टर
क्रोधित हो भेजेगा बवंडर
हाहाकार करेगा निरंतर
सारा विश्व करेगा बंजर
प्राणप्रिये! तुम तो गुणसागर
अरी निगोड़ी! मेरे खातिर
बचती बचती बरसो
सुनो सयानी सखि!
बर्फ़! तुम धीरे धीरे बरसो

[४४].
[४६]. मार्च, १९९३.

RDave

कवि की मौत पर–२.

कवि मर गया,
और कवि खुद को भी नहीं मालूम!
कवि मर गया!
कवि की मौत पर कोई न रोया
खुद कवि भी नहीं।
सच पूछो तो कोई हँसा भी नहीं,
इस लिए नहीं कि
बन नहीं सकता था हास्य-रुदन का आलंबन वह
(यह तो होता ही है कवि-मात्र!)
बल्कि इस लिए कि,
जानता ही नहीं था कवि को कोई,
कवि खुद भी नहीं
कवि मर गया!

कवि मर गया।
आपने कभी सुना है,
अपने जन्मदिन पर कोई मरा?
आपने कभी सुना है,
जिस क्षण कोई जन्मा, उसी क्षण मरा?
77 उसी शुभ नक्षत्र, राशि और लग्न में?
कैसा अद्भुत ढंग है अपना जन्मदिन मनाने का!
आपने कभी सुना है,
किसी कवि का आत्महत्या के लिए अवतरित होना!
आपने कभी सुना है,

RDave

कवि की मौत पर–१

जिसने आत्महत्या की,
हत्या भी की गई है उसकी?
तो सुन लें,
एक ही उदाहरण है जगत में इस बात का ज्वलंत!
कवि!
कवि मर गया।

कवि मर गया।
किस्सा भी है कुछ अजीबोग़रीब
कवि की ज़िन्दगी का!
कहते हैं,
गला घोंट दिया किसी ब्रह्मराक्षस ने कवि का,
ताकि एक बूँद भी न टपके उसके लहू की ज़मीं पर,
और पैदा ही न हो कोई और कवि विश्व में!
कोई कहता है,
काटा गया कवि को क़तरा क़तरा
किसी ब्रह्मराक्षस के द्वारा,
पर पैदा हुआ एक एक क़तरे से
कवि का एक एक अदृश्य अंग और,
78 बन गया कवि
अशरीरी,
बहुरूपिया!
जन्म, मृत्यु और पुनर्जन्म की एक ही घड़ी!
लोग हैरान!
कवि जी उठा
पर ब्रह्मराक्षस ने कहा,
कवि मर गया!

RDave

कवि की मौत पर — ३

यह क्या है तुम्हारे गर्भ में, कवि?
किसकी बच्ची, तुम्हारी?
नाम क्या रखा है, कविता?
कवि!
रसवन्ती बनाओ इसे
कवि! कुछ अलंकार पहनाओ इसे
कवि! लय में चलना सिखलाओ इसे
कवि! थोड़ी बंकिम चाल सिखलाओ इसे
कवि! इसकी एक-एक अदा चित्र-सी हो
कवि!
छोड़ो यार! ये बातें सब!
नहीं कर सकोगे तुम ये सब!
जन्मजात प्रतिभा की कमी!
और कवि मर गया!

कवि! तुम कैसे कवि हो?
देखते नहीं,
हो रहे हैं दुनिया में
79 भूकंप, उल्कापात, चक्रवात और,
हो रहा है सब स्वाहा?
तड़पते हैं इन्सान भूख-प्यास से
मरते हैं कुछ, कुछ मर भी नहीं सकते!
जाति ही जाति की दुश्मन!
नितान्त स्वार्थ राजनीति
लांच-रिश्वत, अर्थनीति

Rbapu

कवि की मौत पर-२

शब्दों का व्यापार,
युद्धों का संहार!
दिखता नहीं सब तुमको?
लिखो, कवि! लिखने लगो!
कवि! कैसे कवि हो तुम?
जन्मे तब से खड़े ही हो!
कहाँ गया तुम्हारी समसंवेदना का सोता?
कहाँ गई तुम्हारी विद्रोही वाणी?
कहाँ गई तुम्हारी कविता अमृतपावनी?
पूछ रहा है ब्रह्मराक्षस कवि को
और ताक रहा है कवि ब्रह्मराक्षस को!
चेतन से कवि जड़ हो गया है
हड्डियों का पिंजर रह गया है।
कवि मर गया!

कवि को मार डाला ब्रह्मराक्षस ने,
कवि को मार डाला खुद कवि ने!
~~कवि~~ जिस पल जन्मा
उसी पल मरा
न कोई रोया, न कोई हँसा
कवि खुद भी नहीं
कवि मर गया!

[४४].
[४६]. अगस्त, १९९४.

RDave

कवि की मौत पर — २

कवि मर गया। कवि,
जिसके जन्म के बाद ही जन्म जन्म कहलाया
और जीवन जीवन। कवि!
जिसकी मौत के बाद ही मरण मरण कहलाया
और निर्वाण निर्वाण। कवि!
जिसके आगमन के बाद ही
जन्म, जीवन और मरण का भेद स्पष्ट हुआ
और स्पष्ट दिखाई पड़ी मोक्ष की मंज़िल!

कवि मर गया। कवि!
जिसके जनमते ही,
एक रंग का न रहकर
मेघधनुष्य सात रंगों का हो गया
और सातों से बहुरंगी! कवि!
जो जाते जाते
समेटता गया सब बदरंगों को अपने साथ
और छोड़ता गया एक नवरंगी सृष्टि
सैंकड़ों चित्रों के आरपार!

४। कवि मर गया। कवि!
जिसने दिया अर्थ बाँझ शब्दों को
जिसने कर दिया शुष्क अर्थ को रसाप्लावित। कवि!
जिसने दी कविता को सुंदर देहयष्टि
भर दी उसमें आत्मा और,
कर दी ध्वनित संसार के प्रांगण में। कवि!

Rdaure

कवि की मौत पर — २

जिसने पहनाये वस्त्र फटेहाल सरस्वती को
ढँक दिये उसके अंग
बनाया उसे सरस्वती
और कर दिया उसे बन्धनमुक्त
सर्वतंत्रस्वतंत्र!
कवि मर गया!

जल-प्लावन हुआ कि बन गया कवि नौका!
भूकंप हुआ ज़मीन पर या ज़मीर पर
दंगा हुआ, फूट पड़ी,
कवि का दिल पहले फटा।
पाट दीं कवि ने दीवारें हृदय के चूने से!
भुखमरी आई, अकाल पड़ा,
बन कर बादल कवि बरस पड़ा!
समस्त जगत का आर्तनाद निकल पड़ा
कवि की वाणी बन कर।
सब का आत्मविश्वास
सब की आत्मशक्ति
कवि!
82 युद्धों में कवि ही तो उड़ा
शांति का एक क्षुद्र तिनका बन कर।
कवि ही तो छुड़ा लाया
मानव-महाराक्षस के चँगुल से
शांति की सुकुमार राजकुमारी को!
कवि मर गया!

RDave

कवि की मौत पर — २

कवि ही तो मानव-रत्न निकाल लाया
जीवन-मंथन करके।
कवि ही तो स्वयं उपमान बन कर आया नये नये
अपनी उपमा के लिए।
कवि ही तो निकाल लाया वर्तमान का कंकाल
अतीत का कूड़ा-कचरा साफ़ करके,
और कवि ही ने तो सिखलाया
~~कवि~~ लड़खड़ाते वर्तमान को
ढंग से खड़ा होना और ढंग से चलना!
कवि ही ने तो दिया इस रागान्ध विश्व को
अपनी आँखों का उजाला।
कवि मर गया!

कवि गया,
जैसे अस्त होता है सूरज कभी न उगने के लिए।
जैसे बन जाता है चाँद अमावस कभी पूनम न बनने के लिए।
कवि मर गया,
नतमस्तक संसार को ऋण-भार से मुक्त करके!
लिखता नहीं था वह कविता,
83 देखता था!
जीता था!
फिर मन में भर कर गाता था!
कवि था क्रान्तदर्शी!
त्रिकाल के कागज़ पर लिखी हुई कविता का
आर्षद्रष्टा!
कवि मर गया!

[७६].
[४८]. ~~[४७]~~. अगस्त, १९९४.

Retype

कवि की मौत पर—३

सौ साल पहले की बात!
बड़ा अचम्भा!
न जाने क्यों और कैसे
संसार के समस्त कवि मर गये
कोई न बचा,
अफ़सोस!
जैसे डायनासोर हो गये थे अदृश्य निमिष-मात्र में
वैसा ही हाल कवि नामधारी जीव का!
सारी स्पीशीस ही हो गई निर्मूल
अफ़सोस!

कैसे हुई यह दुर्घटना?
कवि तो होता है बड़ा मरजिया जीव
बड़ी जीवट वाला!
औतार होता है वह तो संजीवनी शक्ति का
लगभग अशक्य होता है कवि को मार डालना!
और अब कवि का मरना!
कवि क्या गया पूरा काव्य गया!
अन्य कलाएँ बचीं तो क्या?
84 मनुष्य तो फिर भी हो गया
अंश-पशु
नर-पशु!
किन्तु मरा कैसे कवि?
न जाने, पर थियरियाँ हैं!
कोई कहता है,

RDave

कवि की मौत पर — ३

आत्म-हत्या कर ली कवियों ने मिल कर
कवि-नगर में,
परन्तु बस्ती तो होती नहीं कवियों की!
और न उनका देश होता है।
कवि सनातन यहूदी होता है!
कवि जमात में नहीं चलता,
कवि ऊँट होता है,
कवि जिप्सी होता है!

कोई कहता है,
घूमते हुए अनगिनत ब्रह्मराक्षस टूट पड़े
अंतरिक्ष से
कवियों पर।
कवि को ढूँढ़ना मुश्किल नहीं
कवि होता है बोलता जीव!
कवि होता है ~~भ~~ भार-चारण समाज का!
~~निमिष~~ निमिष-मात्र में समाप्त हो गया
कवि नामधारी जीव का
अस्तित्व!
85 कारण जो भी हो,
सौ साल पहले की बात!
संसार के समस्त कवि मर गये,
मानो अस्त हो गई मानव-संस्कृति!
मानो रुक गया समय भी चलते चलते एक क्षण
~~स्तब्ध~~ स्तब्ध हो कर!
फिर चलने लगा लड़खड़ाता
कवि-विहीन!
अफ़सोस!

[४७].
~~[४६]~~. अगस्त, १९८४.

कवि की मौत पर — ४

विश्व के प्रांगण में घंटारव!
मरण हुआ कवि का,
शोकसभा हो रही है!

अदृश्य हो गया कवि नाम का जीवमात्र
इस संसार से,
बाँझ हो गई धरतीमाता!
शोकसभा हो रही है!

सैंकड़ों वक्ता!
किसी को होमर पसंद है तो किसीको कालिदास!
कोई रो रहा है शेक्सपियर को तो कोई कहता तुलसीदास!
कोई पुकारे, हाय वाल्मीकि!
सब के सब हैं निराश!
कोई नहीं जानता,
किसने किया यह जघन्य पाप कवि-हत्या का!
कौन था वह बुभुक्षु,
जो निगल गया कवि-मात्र को, जैसे अजगर!
शोकसभा हो रही है!

86 वैसे तो अच्छा था वह जीव!
कभी-कभु सुनाया करता था अपनी नई रचना
दुनिया के मेलों में
समय- असमय!
तब भी अच्छा था बेचारा जीव!
शोकसभा हो रही है!

RDave.

कवि की मौत पर — ४

कौन गाएगा गान अब हमारे जीवन के
हमारी संस्कृति के?
कब आएगा कवि फिर से इस धरा पर
~~अ~~ सुनाने नूतन वेदों के सामगान
नई पीढ़ी को?
शोक सभा हो रही है!

कवि की मृत्यु!
रो रहा है सारा संसार!
विश्व के इतिहास में प्रथम बार।
मनुष्य ही नहीं,
रो रहा है जीव-मात्र,
जीव ही नहीं; रो रहा है निर्जीव-मात्र!
आर्द्र हो गई हैं आँखें बूढ़े खोखले समय की भी!
कवि का निधन!
शोकसभा हो रही है!

[४८].
[~~५०~~]. अगस्त, १९९४.

87

R.Dave

बेटे से — १

चल बेटे! हम रो लें
बरसों से नहीं रोये हैं, पल एक रुदन को दे दें
चल बेटे! हम रो लें

ठाँसठूँस के भरा कोष आँसू का गहरा हिय में
आँख बचाकर जग की लोभी गाड़े धन ~~मन~~ गह्वर में
दाब दाब कर संचित धन छूटे नहीं अंतिम क्षण में
हाल न हो कहीं ऐसा हमरा, चल, उदार कुछ हो लें
चल बेटे! हम रो लें

जग में जो दुखियारे, उनका क्रन्दन कोई न सुनता
हँसने की हा-हा में हाहाकार न कानों पड़ता
निज नितान्त संकुल वर्तुल में मानव-मन मँडराता
किसीकी मौन बिथा की बातें कान-कान में कर लें
चल बेटे! हम रो लें

पर के लिए ही रोऊँगे, यह निर्णय था निज मन में
युग बीता जलते जलते, फिर भी चुप रहे कुढ़न में
खुशियाँ दे, आँसू का सौदा किया पूर्ण जीवन में
चुप होंगे कल, दोस्त! आज खुद के खातिर कुछ रो लें
चल बेटे! हम रो लें

44

[४६].
[१९]. अक्तूबर, १९९४.

Drums

बेटे से — 2

चल बेटे! हम रो लें
मुझको रोये कल्प हुआ, तुमको भी हँसते हँसते!
चल बेटे! हम रो लें

फूट पड़ा था जल-प्रपात एक दिन मेरे क्रन्दन का
देख हुआ रक्तिम कपोल थे लज्जित महारुदन का
तब से सूखे नयनों का जल-सिंचन कुछ तो कर लें
चल बेटे! हम रो लें

राह तुम्हारी खुशियाँ नाचे, गान स्वयं गुंजित हैं
पुष्पगंधमय मन का मलयानील मधुर सुरभित है
पल दो पल जग के दुखियों के संग उदास कुछ हो लें
चल बेटे! हम रो लें

निज के लिए न रोयें ~~कभी~~, हो मस्त कलंदर हँस दें
छिपे हुए आँसू कठोर, मन की मधु बूँदें रो दें
किन्तु एक दिन रो कर भी मन का कुछ मर्म समझ लें
चल बेटे! हम रो लें

[२०].
81 ~~[१२]~~ अक्तूबर, १९९४.

R.Dave

उत्तर-पूर्वीय अमेरिका में शरद् - 2

शरद् सुहावन आई है
साथ में सखी पतझड़ को लाई है
सुन्दर को किसने बाँधा है?
रंगों पर किसने रोक लगाई है?
ऋतु मनभावन आई है
शरद् सुहावन आई है

शरद् होती है शरद्, और कुछ नहीं,
मगर तब भी सब कुछ!
स्निग्ध, स्वच्छ औ' सुभग
शरद् के हृदय-सा
यहाँ का व्योम।
कोई दुराव नहीं।
व्योम में मँडराती विस्मय-मूढ़ तारक-सृष्टि,
मानो उत्सुक हो
नीचे
अपनी रूप-सज्जा करती हुई
उस सद्य-स्नाता अनिंद्य सुन्दरी
शारदीया धरती के अनुपम सौंदर्य का
रसपान करने को!
90 शरद् सुहावन आई है

पेड़ों की ये रंगीन पत्तियाँ!
और इन पत्तियों के ~~[illegible]~~ लिए प्रेम-विधुर
सूरज की किरणें!

R Dave

उत्तर-पूर्वीय अमेरिका में शरद् - 2

जो रंग देती हैं इन पत्तियों को
अपने हृदय की इन्द्रधनुषी ऊष्मा से!
तो उधर से आती है श्वेत-शीतल चाँदनी,
जो भर देती है इन पत्तियों को
अपने हृदय की शुचि सुषमा से!
फिर उमड़ पड़ते हैं क्षितिज की ओर से
बादलों के दल के दल,
जो जुट जाते हैं-
इनको मद देने के कौशल में!
और इन सबको प्रेम से अकिंचित करते हुए
ये मरुत्गण!
और सबके साथ मस्ती से झूमती, गाती हुईं,
ये नन्हीं नन्हीं बरसाती बूंदें!
जैसे होड़ लगी है प्रकृति के प्राण-तत्त्वों में
इन पत्तों की रूप-सज्जा करने की!

चला गया दिन करके छोटा अपने कद को,
और ढँक ली रात ने इस रूपराशि को
अपनी जगमगाती चूनरी में!
91 यह सोचकर कि,
नज़र न लग जाये कहीं किसीकी
इस रूपसि को!
शरद् सुहावन आई है!

सुन्दरतम मेपल के पत्ते!

R Dave

उत्तर-पूर्वीय अमेरिका में शरद् — ९२

बोलते पत्ते! झूमते पत्ते!
नित नव रागिनी गाते पत्ते!
बीच बीच में अपनी छटा फैलाते
जापानीस मेपल के पत्ते!
रंग धारण करते हैं
रंग बदल भी देते हैं
रंग बदलते रहते हैं
अपनी इच्छा-शक्ति से ये पत्ते!
कब रक्तिम हुए, कब ब्राउन,
कब जामुनी, कब बहुरंगी,
हरे-भूरे और रंग-फागुन,
एक ही पेड़ पर वृन्दावन!
यह धरती तो बाँधी है अपनी हरी चुनरी ओढ़े हुए,
और ये एवर-ग्रीन तो एवर-ग्रीन!
मिल कर ये सब बुन देते हैं
मायाजाल रंगीन,
उतर आता है इन्द्रलोक भी
करके शुभ दर्शन!

92 जाते जाते सिखा गई यह शरद्-सुंदरी जग को
भीषण मार खा कर ही कोई पाता सुन्दरता को!
शरद् सुहावन आई है!

[५२].
[५३]. अक्तूबर, ~~१९९~~ १९९४.
(९२)

Rbave 2.

स्वानुभूति

बनना नहीं होता,
होना होता है।
जीवन की कुछ बातों में
बनना नहीं होता,
होना होता है,
जैसे कि हम हैं!
बहुत बार जीवन में
हम होते हैं,
बन नहीं सकते।
मन, हृदय और आत्मा होते हैं एक ही,
बन नहीं सकते,
होते ही हैं।
तीनों होते ही हैं
अद्वैतमय,
प्रतीति नहीं होती उसकी,
पर होते हैं एक ही,
बन नहीं सकते।
हाँ,
जब प्रतीति होती है उसकी अंतरंग,
तो कहलाती है कदाचित ~~वह~~ यह
93 स्वानुभूति!

करना पड़ता है कठोर परिश्रम और तप
इस स्वानुभूति की सिद्धि के लिए।
~~अलबत्ता सरल नह~~ सुगम नहीं है यह प्रत्यभिज्ञा!

[५२].
[२४] अगस्त, १९९५.

R.Dave

गोडसे - कल्ट

गोली गांधी को लगी या हमको?
गांधी को तो केवल छुआ-न-छुआ गोली ने,
फिर मानो प्रणाम कर के
बस गई उनके हृदय में।
फिर बन गई बूमरेंग, और
गांधी के शरीर से निकल कर
पहले तो काम तमाम किया गोडसे का उसने,
फिर आप्टे आदि कंपनी का।
छोड़ा नहीं किसी को!
गोली गांधी को लगी या हमको?

गांधी को तो लगी ही नहीं गोली!
गांधी स्वयं सो गया
चिर गहन निद्रा में,
निद्रा से भी पर
तुरीयावस्था में!
और गोली बन गई बूमरेंग!
एक पल के मिलियनवें हिस्से में,
चार अरब मनुष्यों की छाती को छूती हुई,
94 प्रत्येक के रक्त की बूंदों से
अपने को और उन सब को रंगती हुई
अदृश्य हो गई क्षितिज के उस पार!
गोली गांधी को लगी या हमको?

छूकर छूकर सिखा गई गोली हमको

RDave

गोडसे-कल्चर

लगते लगते लग गई गोली हमको
समझते समझते समझा गई गोली हमको,
मनुष्य हैं, मतभेद हैं,
मनुष्य हैं, मतभेद भी हैं।
परन्तु अधिकार नहीं होता मनुष्य का
मनुष्य की हत्या करने का।
हिंसा निगल जाती है सबसे पहले हिंसक को।
गोली गांधी को लगी या हमको?

परन्तु सावधान अब सब!
पूजा आरंभ हो गई है गोली चलाने वालों की
आरती उतर रही है गोडसे-कल्चर वालों की!
वापस आ रहा है नव्य कल्चर गोडसे का,
नव्य नाज़ी-कल्चर की तरह!
किन्तु जानते नहीं हैं वे कदाचित् कि
गोली लगी है उनको,
गांधी को नहीं!
~~के~~ यह भी कदाचित् जानते नहीं वे कि
95 जादू जानता है प्रत्येक भारतवासी
गोली में से बूमरैंग बनाने का!
सावधान! अब सब!

गोली गांधी को लगी या हमको?

[४२]. [५५]. [illegible]. १९९५.

R.Dave किसी पार्क में महात्मा गांधी के पुतले को देखकर

यह मूरत गांधी की !
उखाड़ फेंकूँ, आग लगा दूँ
दफ़ना दूँ धरती में !
खुश होंगे गांधी जी !
यह मूरत गांधी की !

कभी नहीं चाहा गांधी ने, उसकी मूर्ति बनायें,
यह भी पब्लिक पार्क बीच! कभी नहीं हो सकता।
इससे बड़ा भला क्या होगा गांधी का अपमान?
स्वार्थी लोग न सुनते उसकी आह और निश्वासन!
यह मूरत गांधी की !

मना किया था गांधी ने अपनी पूजा करने को
मना किया था गांधी ने निज स्तुति-भक्ति करने को
गांधी था इन्सान, चाहता था इन्सान ही रहना
इच्छा थी, औरों को भी इन्सान बनाये रखना
यह मूरत गांधी की !

एक साल में एक बार चरखा ले कर सब जाते
आधे पहर तक जैसे-तैसे चरखे अपने चलाते
96 शीश नवाते झाड़-फूँक कर सब पुतले की धूलि
इसके बाद रफूचक्कर! बोलो जय जय गांधी की!
यह ~~कुर्सी~~ मूरत गांधी की!

रखकर पुतला चले गये सब तथाकथित पूजक जन
पार्क करे रखवाली अब तो, पशु-पंछी, जन्तु-गण!
जीता था तब सदा रही हालत विपन्न गांधी की,
मरने पर भी चैन नहीं, हा! हन्त! हन्त हे गांधी जी!
यह मूरत गांधी की!

[५४].
[५६]. अक्तूबर, १९९५.

RDave

आत्मापराध क्षमापन स्तोत्र

वर्ष के वर्ष के वर्ष बीत गये
पत्ते के पत्ते के पत्ते झड़ गये।
एक शताब्दी से दूसरी में
सूरज ने अपने चरण धर दिये।

अब तो कोई नहीं देता होगा मुझको इतना स्नेह
अब तो कोई नहीं करता होगा मुझको इतना याद
अब तो कोई नहीं करता होगा मेरा इतना मान
और करे भी क्यों?
छोड़ कर चला जो गया था वर्ष के बीच में सबको,
पढ़ाई की ठीक मँझधार में!
सबने पूछा, क्यों?
क्या उत्तर देता, क्यों!
हुआ ही कुछ ऐसा,
समझा न सका, क्यों!

एक धक्का, एक झटका लगा होगा तुम सबको,
आश्चर्य का, पीड़ा का और शोक का।
97 एक बवंडर-सा उठा होगा सबके मन में अवशता का,
प्रतिदिन की समझाहट का, प्रतिपल की विवशता का।
मैं भी विवश! अकथ रहा जो कथ्य बसा था मन में!
मेरे पास तो थे ही मोती कबके? पर,
पिरो न सका तुम सबके वे अनमोल मोती
अपनी कर्तव्य-माला में मैं!

ADave

छात्रापराधक्षमापन स्तोत्रम्

क्षमाप्रार्थी था, क्षमाप्रार्थी रहा
आमृत्यु मैं तुम्हारा।

कितने मासूम थे वे चेहरे तुम्हारे!
कितनी प्यारी और भोलीभाली थीं वे सूरतें तुम्हारी!
कितने भरे हुए थे ज्ञान की चाह से वे हृदय तुम्हारे!
मानव-जीवन की भावी आशाएँ
नारी-जीवन की उत्कट अभिलाषाएँ
भावी जीवन की धुंधली छायाएँ, और
आशा के सूर्य की किरण-रेखाएँ!
क्या पढ़ाएँगी मेरी पुस्तकें जीवन के सच्चे पाठ,
जब तक निकाल कर उसमें से
एक सत्त्वपूर्ण तिनका
रख न दे शिक्षक
अपने हारिल-छात्र के मुँह में,
ताकि बना सके वह उससे अपना जीवन-नीड़
और तर जाये अंत में वैतरिणी जीवन की!

98 मेरी ओ प्रिय छात्राओ!
क्या यही आरज़ू ले कर नहीं आई थीं तुम कॉलेज में?
पूरे हृदय को देख सकता था मैं तुम्हारे
तुम सब की आँखों में!
निर्दोष, शुद्ध-शुचि, सालस, पारदर्शी!
कितने अरमान,
कितने सपने,

Adas

छात्रापराध क्षमापनस्तोत्रम्

(55)

कितनी भावनाएँ उमड़ रही थीं तुम्हारे मन में!
स्थूल गमन तो कबका हो गया मेरा
पर हो रहा है आज तक
मन का मेरे गमनागमन।
कर रहा हूँ चयनावचयन
उसी पुरानी बात का आज तक।
भटक रहा हूँ इस भवारण्य में
अश्वत्थामा-सा मैं।
आज आया मन में
क्षमा माँग लूँ यह पत्र लिख कर मैं।

उतना स्नेह और उतनी श्रद्धा!
उतना प्यार और उतना विश्वास!
यही तो है वह महापाथेय,
जिसको ले कर खड़ा हूँ
अपने जीवन के अंतिम मोड़ पर मैं।

मेरी ओ प्रिय छात्राओ!
आज,
मेरे अंतिम गमन से पहले,
99 इच्छा हो रही है तुममें से एक-एक से मिलने की,
एक बार फिर से वर्षों में जीवन-पुस्तक खोलने की।
देखना है,
कैसी दिखाई देती हैं आज तुम सब की आँखें!
शायद वैसी ही स्नेहशील,
शायद वैसी ही शुचिशील,
शायद वैसी ही क्षमाशील!

[१५]. [~~१४~~]. अक्तूबर, १९९५.

RDave

हरिकैन

सजनि! आया है हरिकैन
सखी री! यह आया हरिकैन
चलो, चलें शेल्टर में, या होटल में ही सुख-चैन
हनी! लो, आया यह हरिकैन

लगा दी है लकड़ी शीशे की खिड़की, दरवाज़े पर
फ्लेशलाइट औ' ट्रान्ज़ीस्टर, मोटर का रखा जम्पर
रेफ्रीजरेटर चालू रख कर और स्वीच सब बन्द
दवाइयाँ ले लीं, खाने के रख दिये हैं फुड-कैन
माई री! चालीसवाँ हरिकैन
सखी री! आया है हरिकैन

तुम ले लो बच्चों के डायपर, खिलौने औ' कुछ बरतन
टॉयलेट-टीस्यू, पीने का पानी, और यह दर्पण
नकद हो जितना, और कार्ड क्रेडिट के मत भूलना
तैयारी कर लो जल्दी, मुँह से कम बोलो बैन
सजनि! यह पहुँचा हरिकैन
सखी री! आया है हरिकैन

100 छुटके को ले लो, तुम, हनी! बड़के को उठाता हूँ मैं
और दो बड़े चले चलेंगे, बिस्तर लाता हूँ मैं
कुत्ते-बिल्ली नहीं जा सकते, छोड़ेंगे केनल में
जी करता, थोड़ी-सी पी लूँ! इसी लिए बेचैन!
यह मुआ आया जो हरिकैन
सखी री! आया है हरिकैन

Rtowe

हरिकैन

वायु आँधी की उठी हुई, सहमी हैं दशों दिशाऐं
महाराक्षसी माया, दानव रूप, कोटि कायाऐं
हुंकारों से, फुत्कारों से करता तांडव-नर्तन
घोर अँधेरा छाया है, लगती है दिन में रैन
सजनवा! डर लगता! हरिकैन
सजनवा! आया है हरिकैन

फाड़ मुँह, भौं तान, उठ रहीं लहरें सागर में
तीन लोक का भेद मिटाते चक्रवात, पलभर में
टुकड़े कर पृथ्वी के गोया भेज रहा सूरज को
इससे मौत भली, पर हम को है कुछ लेन न देन
डेडी री! अच्छा है हरिकैन
सखी री! ~~चल~~ आया है हरिकैन

~~[५८]~~. ~~[...]~~. [५६]. अक्तूबर, १९९५.

101

RDave

स्नो-स्तुति

हे देवाधिदेव स्नो!
हे बर्फ़देव!
स्वागतम्! अथ स्वागतम्!
शतश: नमन
तव स्वागतम्!

हे देवाधिदेव स्नो!
न मैं आस्थावान हूँ, न भक्तिभाव
किसीके आगे शीश नहीं झुकाता मैं अपना
तब भी,
नतमस्तक हो जाता हूँ तुम्हारे आगे।
हे भगवन्!
स्वीकार करो मेरे प्रणाम
इस वर्ष की तुम्हारे प्रथम मिलन पर
स्वागतम्! अथ स्वागतम्!

तड़प रही थी यह सारी धरती तुम्हारी प्रतीक्षा में
विरह-विधुरा,
पतझड़ ने बना दिया था इसे वीरान
बंजर
खँडहर!
रो रो कर झड़ गये पत्ते भी
पीलिया से पीड़ित,
फेंक दिये सारे शृंगार पेड़ों ने भी
अपनी शाखाओं पर से
और खड़े रह गये उदास
वन्ध्य-से!

102

Roave

स्नॉ-स्तुति

ताकते ही रहते हैं तुम्हारे आगमन की दिशा की ओर
जैसे चातक
जैसे मोर।
स्वागतम्! नव स्वागतम्!

हाइबरनेट करना था जिनको,
कर गये,
अपनी अपनी गुफाओं में, दरारों में।
हिजरत करनी थी जिनको,
कर गये,
दक्षिण के देशों में, वनों में।
कर रहे हैं लोग तुम्हारा सम्मान
गा रहे हैं सब तुम्हारे गुणगान
तुम्हारी महिमा
तुम्हारी गरिमा
स्वागतम्! अथ स्वागतम्!

तुम आते हो,
मढ़ देते हो आते ही
103 पूरी प्रकृति को सुन्दरता से
पहना देते हो धवल परिधान उसे
ढँककर उसके नग्न गात!
तुम आते हो,
सजा देते हो आते ही
अपनी श्वेत पतली लकीर से,

R Dave

स्नॉ-स्तुति

इन वृक्षों की शाखा-प्रतिशाखा को,
जो ठूँठ बनी थी पतझड़ की मार से।
नाचने लग जाते हैं तरुवर फिर से थलगन
पा जाते हैं एवरग्रीन भी सुमंडन।
तुम आते हो,
छा जाता है त्रिलोक में आनंद - उमंग
उत्साह
नवजीवन!
स्वागतम्! तव स्वागतम्!

[५७].
~~[५३]~~ नवम्बर, ~~१९९८~~ - १९९५.

104

Rdave

धूमकेतु के आगमन पर

[दो धूमकेतुओं के आगमन के समय]

देखो, देखो! आज अचानक कैसा आया
पुच्छल तारा हम सबके जीवन में!

कहीं कोई संकेत नहीं था, पूर्व-सूचना नहीं मिली थी
विधि के दूरबीन में ना झाँकी, नहीं हस्तरेखा भी बनी थी
जीवन सीधा, साफ़ चला था, वक्रगति की बात नहीं थी
मोड़ नहीं आकस्मिक आये, तूफ़ानों की ~~भ्रम~~ घात नहीं थी
फिर जाने किस कोने से मन के यह
तीव्र गति से उड़ता आ धमका असमय में!
देखो, देखो! आज अचानक कैसा आया
पुच्छल तारा हम सबके जीवन में!

आते ही उत्पात मचाये, छिन्न-भिन्न परिवार उजाड़े
स्निग्ध, मधुर, ऊर्मिभर उर सब उजड़े, बंजर-से कर डाले
जीवन के कोमल कुसुम नव तप्त दाह से झुलसा डाले
क्षितिज पार जाते जाते मन टूक हुए खंडित कर डाले
कूड़े-कचरे का यह ढेला कैसा ~~उल्का~~ उल्कापात
मचा गया रक्तमाँस के मेले में!
देखो, देखो! आज अचानक कैसा आया
पुच्छल तारा हम सबके जीवन में!

105

[५८].
[६०]. मार्च, १९९६.

प्रतीक्षा

मन के चौराहे पर बैठा हूँ, पर कोई आये तक न!
खाली जीवन जीना है सूना, ऊना, पर वह बीते तब न!

कितनी प्यारी बस्ती बसाई थी छोटी-सी साफ़-सुथरी
कितने मीठे जीव बसे थे, गलियाँ उसकी थीं जग-न्यारी
चक्रवात की आँधी आई, नभ में सबको उड़ा ले गई
जी करता, फिर उसे बसाऊँ, पर धरती पर आये तक न!

मिलजुल के हम रहते, खाते, हँसते-कूदते, प्यार जताते
सिमट लिया था विश्व समूचा, अपनी माया में मुस्काते
टूट गया पर बाँध अचानक, बह गये सब के सब चिल्लाते
काल-बाढ़ से उबारता, पर कोई हाथ बढ़ाये तक न!

भरापूरा था जीवन मेरा, किसी बात की कमी नहीं थी
अपनों की हलचल से चौराहे में भी मधुगूँज बसी थी
फिर क्या हुआ कि सबकी आवाज़ें बुलंद सब लुप्त हो गईं
मुझे भी चुप हो जाना है, पर कोई मौन सिखाये तक न!

[२९].
[१२]. [१२]. अगस्त, १९९६.

RDave

मेरे अपने कुछ क्षण

ये कुछ क्षण!
ये कुछ क्षण, जो मुझको मिले हैं,
ये कुछ क्षण, जो बचाकर मैंने रखे हैं,
मेरे अपने हैं ये,
केवल मेरे,
किसीका कोई अधिकार नहीं इन पर
ये कुछ क्षण!

न ये किसीका दान है, न उपहार
न ये किसीकी भीख हैं, न कहीं से उधार
हैं ये मेरी अपनी कमाई!
जीवन भर के कठोर परिश्रम से संचित
हैं ये मेरी अपनी पूंजी!
ये कुछ क्षण!

इनको रखूँगा संजोइ अपनी तिजोरी में मैं
इनको खर्च करूँगा केवल मैं
एक कंजूस की नाईं जमा करूँगा इनको मैं
फूटी कौड़ी भी नहीं दूँगा इनमें से किसीको मैं।
बन्द करके इनको किसी गह्वर गुफा में
107 बैठूँगा कोब्रा बनकर गुफा के दर पर मैं!
ये कुछ क्षण!

जब किसी कष्ट का हरिकेन आयेगा
जब वेदना की बाढ़ को दिल थाम न पायेगा,
जब पतझड़ के रंगों से दिल रंग जायेगा
(१०७) जब स्नो का श्वेत गुलमोहर दिल में शुचि भर देगा

R.Dave

मेरे अपने कुछ क्षण

जब दिल की मिट्टी में बसन्त का पौधा खिलेगा,
तब करूँगा इस्तेमाल इनके लाखवें टुकड़े का मैं,
तब करूँगा लेपन
इनके मधु की मिलियनवीं बूँद का मैं!
ये क्षण मेरे अपने हैं,
मुझ अकेले के!
ये कुछ क्षण!

(move) → ये ही तो हैं मेरे प्रज्ञाचक्षु
ये ही तो हैं मेरे प्रकाशवर्ष,
ये कुछ क्षण!
ये ही तो हैं मेरे अनगिनत ब्रह्मांड,
मेरा ब्रह्मज्ञान,
मेरी संजीवनी-शक्ति,
मेरे अमरत्व का वरदान!
ये ही तो हैं मेरे कवच-कुंडल,
प्राण से जुड़े हुए!
ये गये कि मैं गया!
ये कुछ क्षण!

108 ये ही तो दौड़ते-कूदते हैं मेरे साथ दिन को,
ये ही तो सोते हैं निस्पंद मेरे साथ रात को!
जब अपनी अंतिम मंज़िल की ओर जाऊँगा,
ये ही तो होंगे केवल मेरा वर-मोल!
ये कुछ क्षण!

[६०].
[६२]. मार्च, १९९८.

(१०८)

RDave

उत्तर-पूर्वीय अमेरिका में बसन्त

धीरे धीरे बसन्त हँसता आ रहा है, स्वागत हो !
पृथ्वी के प्रांगण में गठरी खोल रहा है, स्वागत हो!

हल्की हल्की सुरभि बिखराता है कुंजों-वीथियों में
भीनी भीनी महक-मदिरा घोल रहा है कण-कण में
सूरज भी भर रहा सुरा है मानो अपनी किरणों में
धीरे धीरे बसन्त हँसता आ रहा है, स्वागत हो!

वायु गूँज रही मधु गाने नित नित नव नव रागों में
पंछी चहक रहे निर्भीक हो निर्झर के नव नर्तन में
दिन भी भरता उड़ान लम्बी, जो था रात्रि-बन्धन में
धीरे धीरे बसन्त हँसता आ रहा है, स्वागत हो!

अब तक बन्दी था बेचारा जो विन्टर की कारा में
अभी बनेगा बन्दी वह फिर से गरमी के बन्धन में
उदार दिल का अतिथि- देता जग को, जो है गठरी में
धीरे धीरे बसन्त हँसता आ रहा है, स्वागत हो!

109 [६१] [६३]. मई, १९९८.

विशेष नोट देखिए।

RDave

तुम दीवानों में नहीं

माफ़ करना!
तुम दीवानों में नहीं,
हममें से एक नहीं।
हम तो हैं दीवाने,
दीवानों में एक,
दीवानों में बसते!
तुम तो दीवानों में नहीं।
माफ़ करना!

तुम तो हो समझदारों में,
समझदारों में एक,
समझदारों में बसते।
हम हैं मतिमंद,
तुम हो मतिमंत!
हम हैं दीवाने,
तुम दीवानों में नहीं।
माफ़ करना!

हम ठहरे दीवाने
110 दीवाने तो दीवाने, पर
साफ़-सुथरे, स्वच्छ
ट्रान्सपेरेन्ट
क्रिस्टल क्लियर!
तुम ठहरे हजार मुखौटेवाले

Rbaug

तुम दीवानों में नहीं

अपने आपको भी नहीं देख पाते,
और हम हैं बिना नक़ाब वाले।
हम तो हैं दीवाने।
जी नहीं,
तुम हममें से एक नहीं
तुम दीवानों में नहीं,
माफ़ करना!

[६२]. ~~[६४]~~. जुलाई, १९९८.

RAleus

बिबिधता की रक्षा

बिबिधता की रक्षा हो!
हाँ,
अगर करना तुम्हें स्थापित जगत में एकता
बिबिधता में ही वह संस्थापित करो
मत करो तुम नाश उसका, जगतजन!
बिबिधता की रक्षा हो!

मैं नहीं कहता कि हम सब एक न हों
मैं नहीं कहता कि हम अन्वित न हों
जो भी हों
जैसे भी हों
सब बिबिध हों।
बिबिधता ही एकता का मूल है
बिबिधता ही अन्विति-आलंब है।
बिबिधता की रक्षा हो!

बिन बिबिधता एकता नहीं आएगी
बिन बिबिधता अन्विति नहीं आएगी
धर्म, लिपि, भाषा व संस्कृति, सभ्यता
वेषभूषा, अंक, संगीत, वक्तृता,
112 इन्द्रधनुषी रंग हों
प्रकृति के बिम्ब हों
सब बिबिध हों।
भिन्नता में एकता स्थापित करें
अलगता में अन्विति स्थापित करें।
बिबिधता की रक्षा हो।

(११२)

R.Dave

बिबिधता की रक्षा

ये सितारे, चाँद-सूरज, बिश्व सब बतला रहे
पेड़-पौधे और अणु-परमाणु के कण कह रहे
प्रकृति पूरी है पल पल बिबिधता में जी रही
फिर भी है वह एक और अखंड-रूपी रम रही।

भिन्न सब ब्रह्मांड हों
बाह्य रूप विभिन्न हों
मूल में सब एक हों।

बिबिध बिश्वों में रमाएँ आज हम
एकता औ' अन्विता की धुनी हम।
बिबिधता की रक्षा हो!

[६५]. ~~[६२]~~. अगस्त, १९९७.
[६३].

113

R.Dave

पतझड़ के पत्ते

हम पत्तों के रंग देखने चले,
या पत्तों से खुद को रंगने चले!

शरद्-सुन्दरी है सज आई
पतझड़ को भी है संग लाई
दोनों ने मिल कर बनाये हैं
पत्ते ये पेड़ों पर पले
हम पत्तों के रंग देखने चले

कुछ पत्तों में रंग नहीं, बल्कि
कोई नव सृष्टि भरी है
बखान इनका सरल नहीं है
चाहें लगें कवियों के मेले
हम पत्तों के रंग देखने चले

पत्ते नहीं, निर्दोष शिशु हैं
रंगबिरंगी, भोलेभाले
चलो ना हो जायें शिशु हम भी
पत्तों-से बन जायें निराले
114 हम पत्तों के रंग देखने चले

नन्हें नन्हें पत्ते हैं ये
इनमें से ~~प्रत्येक~~ हरेक के दिल में
चार अरब वर्षों के जैसे
होरी-खेलन रंग घुलमिले
हम पत्तों के रंग देखने चले

[शर्ले] ~~इंदु~~. अक्तूबर, १९९७.

विचार और संगीत

गाने लग जाती हूँ, ताकि विचार आना बन्द हों
विचार-वायु उठती जब जब, गाने मैं लग जाती हूँ

लगा रहा है ज़िन्दगी में उलझनों का रोज़ मेला
एक बस! संगीत है, जो तोड़ सकता सिलसिले को
गुनगुनाती इस लिए हूँ
गाने मैं लग जाती हूँ

जा नहीं सकता मुआ मन सोच-सागर पार, हाय!
ढूँढ़ने जो था गया मोती, अधम धिक! मुँहजला यह
राग-मौक्तिक चुन रही हूँ
गाने मैं लग जाती हूँ

मैं मिटी, जीवन रहा बन एक खंडहर नष्ट-सा
है फूटा अणुबम हृदय में. और बाहर ज़लज़ला
स्वर-अणु को फैला रही हूँ
गाने मैं लग जाती हूँ

[~~६७~~]. [~~६६~~]. नवम्बर, १९८८.
[६, ५].

115

Rdone

कड़ुई जीभ

जीभ ~~कड़ुई~~ कड़ुई हो गई
कड़ुआपन खाते-पीते वह खुद ही कड़ुई हो गई
जीभ कड़ुई हो गई

सोचा था, सबको पिलाऊँगा मैं ताज़ा अमृत का रस
सोचा था, भर भर कटोरे, मैं दूँगा जग को जीवनरस
किन्तु क्या कुछ कैसा हुआ कि मिठास तब्दील हो गई
मन मुए की मुराद मेरे मन ही मन में रह गई
जीभ कड़ुई हो गई

सोचा, थोड़ी शक्कर खा कर बनाऊँगा मैं इसको मीठी
थोड़ा मधु, थोड़ा-सा गन्ना मिलने पर, सोचा बदलेगी
किन्तु हाय! जीवन की वायु कुछ ऐसा नवमिश्रण भर गई
अपना ही रस पी कर बेचारी जिह्वा बदस्वाद बन गई
जीभ कड़ुई हो गई

भटक रहा हूँ भवाटवी में जीभ लिए तनहा दर दर मैं
ढूँढ़ रहा हूँ मीठापन, उसमें जो था, जग के घर घर मैं
कोई कभी मिलाएगा मधुरस, बस इतनी प्यास रह गई
संजीवन-रस उभरेगा जिह्वा पर, इतनी आस रह गई
जीभ कड़ुई हो गई

116

[१८]. ~~[illegible]~~ जनवरी, १९९८.
[१६].

RDave

भारत से अमेरिका जाते हुए:

गा मधुर, मन! गान गा तू
इस वियोगी राह से गा योग की संरागिनी तू
गा मधुर मन! गान गा तू

अब रहा हूँ मैं अकेला, और मेरी संगिनी
गईं बिखर महफ़िल जमी, थी कुछ दिनों की रंगिनी
तज रहा हूँ गोद माँ की, जो रही शिवकारिणी
गा मधुर मन! गान गा तू

सुन ज़रा ऐ दोस्त मेरे! कठिन है यह रागिनी
स्वर बिखरने हैं लगे, है रूठी वीणावादिनी
अब बची है पास मेरी ग़म-कथा औ कारिणी
गा मधुर मन! गान गा तू

तुम जीवन में क्या ही आये, आ गई थी रोशनी
सप्तरंगी सृष्टि से बनी ज़िन्दगी वरदायिनी
हम कलंदर मस्त होकर थे पीते संजीवनी
गा मधुर मन! गान गा तू

फिर कभी मंज़िल कहाँ ले जाएगी यह यामिनी
फिर क्रीड़ा शिशुसहज होगी कब कहाँ सुखदायिनी
117 अब दशा हमराहियों की जलकमलवत् ही बनी
गा मधुर मन! गान गा तू

[६]. अप्रैल, १९९८.

[६.७].

(११७)

R.Dave

दो गुरुओं का सम्मिलन

१.

एक साथ दो गुरुओं के शुभ दरसन हुए,
री, भाग्य खिले !

पूरब में गुरु आया, औ' पच्छिम में शुक्र चला घर को
रूप-तेज दोनों को अनुपम, करते गरिमामय नभ को
इक-दूजे को देख निमिषभर दोनों ही कुछ कुछ हिचके
फिर अपनी ही मस्ती में धीरे धीरे नभ में विचरे

बृहस्पति का एकचक्री शासन पूरब में था फैला
आधे नभ तक नहीं कर पाता कोई उसका मुकाबला
कमंडलू-कौपीन लिये पच्छिम में शुक्राचार्य तपे
अर्द्ध ~~व्योम में~~ व्योम में लिये दनुगण-से उडुगण वे धीर चले

बीचोंबीच खड़ा है मंगल, भक्ति-भीति से लाल हुआ
बिछुआ से अनुनय कर उसने पारिजात का फूल लिया
माँग हँस से भी मोतिन की माला बना कर ले आया
गुरु-शुक्र के चरण-कमल धो लिए पुनीत गंगाजल से

देव-दनु की गोया इच्छा, शुक्र गुरु से भेंट करें
मध्यस्थी मंगल को बात जँची कि गुरु औ' शुक्र मिलें
118 पर मंजूर नहीं था दानव-गुरु को, वे मुख मोड़ चले
कमंडलू-लोटा ले अपना गगनरेख के पार चले

RDave

दो गुरुओं का सम्मिलन

२.

एक साथ* दो गुरुओं के शुभ दरसन हुआ,
सौ भाग्य खिले!

निराश हो मंगल भी आखिर अपने घर की ओर गया
किन्तु ईधर गुरुओं के मन में विचारबीज बोता ही गया
डेढ़ साल के बाद शुक्र के गुरु को न्यौता भेज दिया
और इक-दूजे को हँसकर आलिंगन में बाँध लिया

दोनों के अति दिव्य तेज से नभ-प्रांगण जगमगा उठा
वैर-विरोध समाप्त हुआ, नव-शान्ति-मंत्र अब गूँज उठा
बात बधाई हिरने ने जब, व्याध भी समझा, ठहर गया
उडुगण हरसे, चाँद खिला, आनन्द-गान अब गूँज रहा

एक साथ दो गुरुओं के शुभ दरसन हुआ,
सौ, भाग्य खिले!

[~~६०~~]. ~~फरवरी~~, १९९९.
[६८]. जुलाई,

* विशेष नोट देखिए।

119

R.Dave

ढलन

ढलते रंग भी कितने सुन्दर होते हैं!
चमकते तेज़ रंगों की तीव्र ख़ुशबू,
और ढलते रंगों की हल्की-सी,
भीगी-भीगी-सी महक!
कितनी सौंधी लगती है!
सूरज जब ढल जाता है शाम को
और धीरे धीरे
कदम रखता है दूसरी दुनिया में अपने,
रंगों की सारी जमात उड़ती है तब उसके पीछे
अपने पंख पसारे,
कितनी सुन्दर
कितनी प्यारी!
वह भी,
जा कर दूसरी दुनिया में
सूरज के साथ,
तेज़ चमक देगी अपनी
तीव्र महक फैलाएगी
और फिर ढल जाएगी
सूरज के साथ!
कितनी प्यारी लीला!
ढलते रंग भी कितने सुन्दर होते हैं!

120 ढलती उम्र भी कितनी सुन्दर होती है!
जवानी की चहल-पहल
भभक भरी चकाचौंध, और

Rdave

ढलान

बूढ़ी आँखों की गहराइयों में से मिलती
पकेपन झाँकी!
वृद्ध जब ढल जाता है शाम को,
और कदम रखता है अपने,
मृत्यु की दूसरी दुनियां में धीरे धीरे,
उसकी सच्चाई की गहन अनुभूतियों से
पके हुए
रंगों की पूरी जमात चलती है उसके पीछे
अपने प्राण पसारे!
कितनी भली
कितनी प्यारी!
वे भी
जा कर दूसरी दुनिया में
उस वृद्ध के साथ
तेज़ चमक देंगी अपनी
तीव्र महक फैलाएगी
और फिर ढल जाएगी।
यह नित्य नेमि-क्रम चलता रहेगा
सदा के लिए!

ढलते रंग भी कितने सुन्दर होते हैं!
121 ढलती उम्र भी कितनी सुन्दर होती है!

[६१].
[७०]. अक्तूबर, १९९८.

RBawe

अहम्

अहम् का पहला लक्षण 'मैं'!
जित देखूँ ~~कित~~ मैं ही हूँ तित ही
दूजा दिख नहीं पड़ता,
फिर भी अन्धे की नाईं वह
खुद को देख न सकता,
'मैं' का पर्दा कभी न खुलता
नाटक चलता रहता।
अहम् का पहला लक्षण 'मैं'!

अहम् का दूजा लक्षण स्वार्थ!
बटोरता रहता है प्राणी
सब कुछ अपने अर्थ,
जितने जीव यहाँ, सबको
जीना उसके ही अर्थ,
सबके कंधों पर चढ़ कर
मंज़िलें चढ़ता व्यर्थ।
अहम् का दूजा लक्षण स्वार्थ!

अहम् का तीजा लक्षण ठगी
'गहरे पानी पैठ' समझ
सतहों पर तिरता रहता,
122 खुद की ठगाई के नभ में वह
पाँखें पसार उड़ता,
काम कराता दूसरों से,
छल कर, उचित बताता।
अहम् का तीजा लक्षण ठगी!

RDave

<u>अहम्</u>

अहम् का चौथा लक्षण सीख!
अपना अर्थ बता जीवनका,
तोड़-मरोड़ मचाता,
"परोपदेशे पाण्डित्यम्"
अंदर कुछ, बाहर बनता।
भीतर की परतें नहीं खुलतीं
दूजे की खुलवाता।
अहम् का चौथा लक्षण सीख!

[७०]. [७२]. जुलाई, १९९९.

123

R Dave

जन्मदिन

चलो एक दिन मैं मुस्का दूँ!
यह दिन मेरा जन्मजात अधिकार है
यह दिन मेरे जीवन का एतबार है।
यह वह दिन है,
जहाँ संगम होता है
करुणा और हर्ष का,
मौन और मुखर का।
यह मेरा दिन है,
इसका मैं चाहूँ सो करूँ।
चलो एक दिन मैं मुस्का दूँ!

यह मेरा दिन है
इस एक दिन का मैं वह सब करूँगा
जो नहीं कर पाया
बरसों से।
गर चूमना है ~~इसे~~ तो चूम लूँगा। / इसे
फेंक दूँगा गुड़ी-मुड़ी बना कर ~~इसे~~, ~~आदि~~ / इसे
मर्जी हुई, कीचड़ बना कर रौंदूँगा।
रोटी बेलूँगा आटा पीस कर उसका।
अपने दिल के चरखे पर कातूँगा इसे
और पहनूँगा कपड़ा बना कर इसका।
बच्चा बना के इसके साथ खेलूँगा।
124 और बनाऊँगा इसे अपनी हारिल ~~[illegible]~~ की लकड़ी।
गला दबा कर मार डालूँगा मैं इस एक दिन को,
या अपने खून का अमी पिला कर अमर बना दूँगा।
हँसी का रॉकेट बना कर अवकाश में ~~बिखेर~~ भेज दूँगा।
पछाड़ूँगा समंदर में आँसू का हाहाकार बना कर।
चलो एक दिन मैं मुस्का दूँ!

(928)

R Dave 2

जन्मदिन

इस एक दिन को करूँगा मैं खेती
जीवन के खेत में अपने,
और उपजाऊँगा एक नये विश्व का धान।
यह मेरा दिन है,
इसका मैं चाहूँ सो करूँ
चलो एक दिन मैं मुसका दूँ।

इस एक दिन की विचित्रता यह है कि,
जो केन्द्रबिन्दु है इसका
वही परिधि है इसकी,
और जो सीधा-सरल रेखा है इसकी,
वही विभिन्न परिमाण हैं इसके।
तब भी
गुत्थी नहीं है कहीं कोई
उलझन नहीं है कहीं कोई।
चलो एक दिन मैं मुसका दूँ।

पीछे मुड़कर मैं नहीं देखता
पत्थर हो जाऊँगा न!
बस आगे देखता चलता हूँ
एक आँख से,
और दूसरी से आज को।
वैसे तो एक आँख और भी रखी है मैंने
पीछे देखने के लिए!
125 यदि स्वप्नद्रष्टा हूँ
तो त्रिकालदर्शी भी।
यह दिन मेरा है
इसका मैं चाहे सो करूँ
चलो एक दिन मैं मुसका दूँ।

(927)

जन्मदिन

नब्बे साल बीत गये
नब्बे साल के दिन बीत गये
तब मिला है मुझको यह एक दिन।
कोई दूसरा ही छीन जाता था इसको
हर बार
या मैं ही दिया करता था ~~इसको~~ किसीको
हर बार।
अब आज जब मैं दे रहा हूं मुझको
यह एक दिन
तो खूब मज़ा मारूँगा इसके साथ मस्ती से,
मौज उड़ाऊँगा इसके साथ धूमधाम से।
लगा के रखूँगा मैं इसे अपने सीने से,
प्रेमी की तरह।
खर्च बिलकुल नहीं करूँगा मैं इसे,
कंजूस ~~क~~ की तरह।
ऐसा खींचूँगा इस एक दिन को मैं कि,
एक बरस बन जाएगा ~~वह~~ यह।
जीवन और मृत्यु दोनों आयेंगे
दौड़ते हुए,
और रह जायेंगे स्तब्ध-
देख कर
यह चमत्कार!
126 यह मेरा दिन है
इसका मैं चाहे सो करूँ।
चलो एक दिन मैं मुझको दूँ।

[७१]. [७३]. अगस्त, १९९९/ 2092.

R.Save

पत्नी के प्रति

जब हम-तुम मिले,
तुम्हारी घड़ी में ग्यारह बजे थे
और मेरी में एक।
पाटने का प्रण लिया था हमने समय को
और मिलाने का दो काँटों को।
मेरा काँटा रहा रुकता-चलता
और तुम्हारा रहा चलता-दौड़ता,
इसी हेतु!
समय हो गया है अब यह देखने का कि,
मिल पाये हैं या नहीं
हमारे जीवन की घड़ी के दो कांटे!

रोमान्स होता है प्रेमियों का प्रधान रस,
जीवन-जल!
फिर भी अल्प-जीवी!
रोमान्स पकता है प्रेम की जड़ी-बूटी में,
काल उसे कूटता है और
पल उसे पीसता है।
विश्वास उसे घूंटता है और
समर्पण उसे संवारता है।
पक जाता है रोमान्स प्रेम में और
127 परिवर्तित हो जाता है प्रेम संजीवनी बूटी में,
जिससे निकलता है
अमीजल
घना,
घुटा हुआ,
चिरजीवि!

R.Dave

पत्नी के प्रति

समय आ गया है अब यह देखने का कि,
परिवर्तित हुआ है या नहीं
हमारा प्रणय
सरस, घनीभूत
संजीवन – रस में ।

एक गहरा फैलाव है
आकाश के भीतर,
वरना न बादल आ सकते हैं,
न हो सकती है बरसात,
मिट्टी भर जाती कोरी की कोरी!
एक गंभीर आर्द्रता है
महासागर के भीतर,
वरना न जीवन पनप सकता है,
न घूम सकती है यह पृथ्वी,
शिलाखंड ही रह जाती पूरी की पूरी!
किसान का हल ही तो बनाता है
माटी से सोना!
क्षितिज की धारा ही तो मिलाती है
नभ-धरती का कोना!
हमारा वह प्रथम मिलन,
128 हमारी वह अंतिम विदाय,
न फिर से होगा,
न फिर से होगी।
तब फिर समय आ गया है यह देखने का कि,

R.Dave

पत्नी के प्रति

बन पाये हैं हम
फैला हुआ आकाश,
पारसमणि-सा हल,
सामञ्जस्य-रूप क्षितिज!

प्रेम का स्वरूप समझना हो तो देखो
धरती और आकाश को।
जब से हुआ जन्म,
घूम रही है धरती
अभिसारिका बन कर आकाश की।
और हाथ फैलाता चला जा रहा है
यह धीरोदात्त नायक आकाश
अपनी धरती को पाने को।
तब भी यदि मिल सकते हैं तो
केवल उस दूर क्षितिज पर,
जहाँ दोनों के बीच में
बराबर मौजूद रहती है यह क्षितिज-रेखा,
जिसे वे लाँघ नहीं सकते।
उदाहरण नहीं मिलेगा विश्व में
ऐसे उदात्त प्रेम का।
अब समय आ गया है यह देखने का कि,
129 क्या बन पाये हैं हम-तुम
धरती और आकाश?

[०२]. ~~[०८]~~. अगस्त, १९९९.

कारगिल के बाद

Rdave

भारत पर आक्रमण

राक्षस आये हैं भारत में सीमारेखा करके पार
बुरी नीयत से आये हैं घुसपैठी हम पर करने वार

अभी उन्होंने नहीं सुना, शूरवीर कैसे होते हैं
अभी उन्होंने नहीं देखा, रणवीर कैसे लड़ते हैं
अभी उन्होंने नहीं समझा, बलवीर कैसे जूझते हैं
आँख खुली उनकी, जब दिया खदेड़ सबको सीमा-पार

आज उन्होंने देखा है, बलिदानी कैसे होते हैं
आज उन्होंने भुगता है, अभिमानी कैसे अड़ते हैं
आज उन्होंने समझा है, वरदानी क्या वर देते हैं
जान बची लाखों पाये, कहते नापाक हुए सब पार

किराये के लड़वैये कब तक दिलायेंगे दुश्मन को जीत?
ढाल बनेंगे कब तक भाड़े के टट्टू बन कर मन-मीत?
शीश गिरे श्रीफल-से, पीछेहट करके भागे वे भीत!
कभी नहीं आयेंगे बाबा! जाने दो ज़िन्दा उस पार!

[७३].
[६२]. अगस्त, १९९९.

कारगिल के बाद

R.Dave

मूँछ-फूटा जवान

पहली बार मैदाने-जंग में आया हूँ,
जवान हूँ, मूँछ-फूटा हूँ, पर,
खून उबलता लाया हूँ।

बीच अहिंसा-हिंसा के मैं पिस रहा हूँ,
बीच युद्ध औ' शान्ति के मैं घुन रहा हूँ।
सब कुछ सहना धर्म, न दुश्मन की मनमानी।
धर्म राष्ट्र-रक्षा का भी है,
उसे निभाने आया हूँ।
खून उबलता लाया हूँ।

आतंकवाद और आक्रमणों का दैत्य खड़ा है,
अनसुनी-अनदेखी करके विश्व खड़ा है,
भूल भाईचारा, भाई से भाई लड़ा है,
धर्म एक बन कर लड़ना है,
उसे निभाने आया हूँ।
खून उबलता लाया हूँ।

[७४].
[illegible]. अगस्त, १९९९.

131

कारगिल के बाद

RDave.

जम्मू और कश्मीर

जम्मू-कश्मीर एक राज्य है,
भारत का अविभाज्य भाग है।

कश्मीर को जम्मू से जुदा किया, कि उसकी जान गई!
जम्मू को कश्मीर से जुदा किया, कि उसकी जान गई!
दुनियावालो! भारतमाता का यह अंग अकाट्य है,
जम्मू-कश्मीर एक राज्य है।

अनजाने में आ कर कोई चाल कुटिल कोई चल गया,
कूटनीति का खेल खेल फूट का बीज चुप चुप से डाल गया,
विषमय बीज को पानी देना, मित्रो! कब तक न्याय्य है?
जम्मू-कश्मीर एक राज्य है।

अब के कोई नहीं फँसेगा जुदाई-मायाजाल में,
अब के कोई नहीं फँसेगा मज़हब-मायाजाल में,
अब के कोई नहीं लड़ेगा, यह भूमि अविभाज्य है।
जम्मू-कश्मीर एक राज्य है।

[७४].
[७७]. अगस्त, १९९९.

132

कार्गिल के बाद

R.Dave.

मेरी अहिंसा

मेरी अहिंसा नहीं कायर की !

जब तक बस चलता, सह लेता, बातें, घातें दुश्मन की
हद को पार करे वह शत्रु, बारी तब मुठभेड़ की
मेरी अहिंसा नहीं कायर की !

पंचशील में श्रद्धा मेरी, उसे निभाता चलता हूँ
पर जब कोई शील छोड़ता, बारी तब तलवार की
मेरी अहिंसा नहीं कायर की !

साथ साथ सब रहें, साथ सब जियें, साथ फूलें-फालें
पर जब कोई धोखा देता, बारी तब ललकार की
मेरी अहिंसा नहीं कायर की !

[७७].
[७६]. अगस्त, १९९९.

134

कारगिल के बाद

[illegible]

भारत और पाकिस्तान के प्रति

समझो बन्दे पाकिस्तान !
समझो बन्दे हिन्दुस्तान !
जागो, देखो, आँखें खोलो,
दुहराना न वही दास्तान !

शरीर अलग है तुम दोनों का, अलग रहेगा, यह समझो
मन तो फिर भी एक ही ठहरा, एक रहेगा, यह समझो
फिर झगड़ा करने से क्या पाओगे? गौर करो, गुन लो
जागो, देखो, आँखें खोलो,
दुहराना न वही दास्तान !

काहे फँसे साम्राज्यवादियों के शब्दों की जाली में?
क्यों फिसले संस्थानवादियों के सूत्रों की काई में?
कभी नहीं ऊँचा उठने देने की चाल निराली में?
जागो, देखो, आँखें खोलो,
दुहराना न वही दास्तान !

[७६].
~~[७८]~~. अगस्त, १९९९.

133

कारगिल के बाद

R.Dave

अणुशस्त्र

अणुशस्त्रों का नाश करो, भारतवर्ष! पाकीस्तान!
इक-दूजे विश्वास करो, भारतवर्ष! पाकीस्तान!

यदि कोई भिड़वाता तुमको, तो क्या तुम भिड़ जाओगे?
कोई उकसाता यदि तुमको, क्या सचमुच तुम उकसोगे?
छोड़ो बालिश बातें, छोड़ो भीतर का मिथ्या उफान!
भारतवर्ष! पाकीस्तान!

जग कहता है, शासन अपना कभी नहीं कर पाओगे
हुए भले आज़ाद, कभी आबाद नहीं हो पाओगे
सह सकते कैसे हो तुम इतनी हांसी, इतना अपमान!
भारतवर्ष! पाकीस्तान!

शस्त्रों से शान्ति नहीं मिलती, युद्धों से नहीं प्रेम
सदियाँ बोले बात पुरानी, सुन लो, सोचो क्षेम
भ्रम से मुक्त बनो, मित्रो! कर लो दिल का आदान-प्रदान
भारतवर्ष! पाकीस्तान!

[७८].
[२०]. अगस्त, १९९९.

135

कारगिल के बाद

R Dave

दक्षिण एशिया के देश

दक्षिणएशिया के सब देश जाग सकें तो अच्छा हो।
द्वेष परस्पर, बैर परस्पर छोड़ सकें तो अच्छा हो।

तथाकथित ये महासत्ताएं घेर रही हैं इन सबको
उनके चंगुल से जो ये सब छूट सकें तो अच्छा हो।

अर्थतंत्र के धनी राष्ट्र एकाधिकार ले बैठे हैं
उनके अंध इजारे को ये तोड़ सकें तो अच्छा हो।

जग के विकसित देश इन्हीं को ताक रहे हैं बरसों से
हो कर एक, उन्हें कुछ करतब दिखा सकें तो अच्छा हो।

भला परस्पर है इन सबका एक साथ मिल रहने में
यह पयाम ये देशनिवासी समझ सकें तो अच्छा हो।

[७९].
[२४], अगस्त, १९९९.

136

कारगिल के बाद

RDave

भारत-पाक निवासी

हम हैं भारत-पाक निवासी
नेक सभी इन्सान, न कोई हिंदू, मुस्लीम, सिक्ख, ईसाई
हम हैं भारत-पाक निवासी

धर्म हमारा प्रीत निभाना, मज़हब भ्रातृ भाव बढ़ाना
लड़ना नहीं है काम हमारा, मिल कर रहना ध्येय हमारा
वचन हमारा, हम सब साथी
हम हैं भारत-पाक निवासी

देश के संस्कारी बन्दे हम, देश के अभिमानी बन्दे हम
दोनों देशों के बीच अब से एका लाएँगे ज़रूर हम
बात यह पक्की, हम सब साथी
हम हैं भारत-पाक निवासी

दोनों देशों में आबादी औ' समानता स्थापित करना
सब की तरक्की के भावों को सच करके जग को दिखलाना
गले लगा जाएँ हम सब साथी
हम हैं भारत-पाक निवासी

एक बड़ा परिवार हमारा, दक्षिणेशिया का है ~~खास~~ प्यारा
131 अलग अलग फिर भी एका है इनमें, जग में सबसे न्यारा
न्यारे रहेंगे हम सब साथी
हम हैं भारत-पाक निवासी

कारगिल के बाद

Rename..

भारत-पाक निवासी

अब के वैर जलेगा ख़ुद ही, अब के द्वेष दलेगा ख़ुद ही
दुश्मनी ख़ुद दुश्मन होगी, घर घर में नव ज्योत जलेगी
शपथ हमारी, हम सब साथी
हम हैं भारत-पाक निवासी

[२०]. अगस्त, १९९९.

138

Rstave

दो देशों का नागरिक

मैं दो देशों का नागरिक!
जन्मा भारत में
किन्तु बना कर्मों से अमरिकन
दोनों का प्रेमिक!
मैं दो देशों का नागरिक!

काला नहीं, न गोरा मैं
ख्रिस्ती न हिन्दू, नहीं मुसलमीन
मनुष्य हूँ,
हूँ निभा रहा कर्तव्य,
अमन का सच्चा प्रेमिक!
मैं दो देशों का नागरिक!

संकट भारत का है मेरा
संकट ~~मुझे~~ यु.एस. का भी मेरा
समर्थ हूँ,
हूँ निभा रहा युगधर्म,
शमन का सच्चा प्रेमिक!
मैं दो देशों का नागरिक!

[२९]. अगस्त, १९९९.

139

R Dave

दिल के प्रति

दिल! तू रुक जा रे!
नींद के देश की नौका आई, चढ़ कर सो जा रे!
दिल! तू रुक जा रे!

पल पल छिन छिन घड़ी की बाईं टिक टिक करता रे!
ऐसा लगता, समय रुकेगा, तू न रुकेगा रे!
दिल! तू रुक जा रे।

ले समेट जीवनभर की जो थकान सिमट रखी है
कर दे बन्द बिसाह, ऊर्मि की दुकान खोल रखी है
दिल! तू रुक जा रे!

जीवन तो नासमझ, मूढ़ है, करता रहता घात
मृत्यु जैसा दोस्त नहीं, जो समझे तेरी बात
दिल! तू रुक जा रे!

चिपक रहा क्यों जीवन से अब तक? मेरे नादान!
समय रुका है तुझे उठाने, उठ जा ओ अनजान!
दिल! तू रुक जा रे!

[८२]. जनवरी, 2002.

140

RDave

मन पर आवरण

मन पर चाहिए मेरे एक महीन-सा आवरण

कभी मैला हो जाता है वह, कभी उजला-सा दिखता है
कभी सुख-साँस, कभी दुःख-हाय, रंग रंग में रंगता है
द्वन्द्वों की दुनिया से करना है उसका उद्धारण
मन पर चाहिए मेरे एक महीन-सा आवरण

राजहंस से लाऊँगा मैं माँग तैल की ग्रन्थि ज़रा
खा के थपेड़े पानी के फिर भीगेगा मन नहीं ज़रा
बूँदें सारी ढल जायेंगी, चिन्ता का नहीं होगा कारण
मन पर ~~मेरे~~ चाहिए मेरे एक महीन-सा आवरण

जा सूरज से माँग लाऊँ कुंडल औ' कवच सुदिव्य-से
फिर लपेट दूँ उनको अपने ~~मन~~ मन के चारों ओर प्रेम से
भेदे जायें न कभी किसी से, स्वर्ग-नर्क का बने निवारण
मन पर चाहिए मेरे एक महीन-सा आवरण

[८३].
[१५]. जनवरी, 2000.

141

R.Dave

महा यज्ञ की आहुति

महा यज्ञ की आहुति हूँ मैं !
प्रसन्न करने धरती के देवों को जो दी जाती है,
महा यज्ञ की आहुति हूँ मैं !

यह आहुति है ऐसी, जो धीरे धीरे जलती है
जलने पर भी जो पूरी दिनरात, कभी नहीं सूखती है
धीरे धीरे क्षीण होने पर भी अग्नि से जूझती है
महा यज्ञ की आहुति हूँ मैं !

मेरे जन्म को बना के वेदी यज्ञ किया जाता है
अध्वर्यु है जीवन, मेरा अर्घ्य दिया जाता है
उद्गाता बन मृत्यु सुंदर सामगान करता है
महा यज्ञ की आहुति हूँ मैं !

स्वर्ग और सुख के कामी जन स्वर्गकाम करते हैं
तिल तिल मेरा ले, देवों को यज्ञभाग देते हैं
होगी इच्छापूर्ति समक्ष, फूले नहीं समाते हैं
महा यज्ञ की आहुति हूँ मैं !

खुशी खुशी जलता हूँ बन कर अर्घ्य हवन का इस में
थोड़ा थोड़ा सबको देता यज्ञभाग उनका मैं
होगा पूरा यज्ञ, पूरा जब स्वाहा हो जाऊँगा मैं
महा यज्ञ की आहुति हूँ मैं !

142

[२४].
[२५]. जनवरी, २०००.

R.Dave

जरावस्था

झुर्रियाँ पड़ने लगीं
अब त्वचा इस देह की चुपके से पलटाने लगी

मलमली-सी, रेशमी-सी सोहती थी जो कभी
देखती हूँ, वह अचानक खुरदुरी होने लगी
झुर्रियाँ पड़ने लगीं

खींचती थी एक दिन जो चित्र सुंदर रंग के
उँगलियाँ वे ख़ुद विविध अब चित्र बन जाने लगीं
झुर्रियाँ पड़ने लगीं

साफ़-सुथरी-सी सदा चमड़ी जो रहती थी ~~[illegible]~~ कभी
आज देखो! पिण्ड हो बरबस लुढ़कने भी लगी
झुर्रियाँ पड़ने लगीं

[८५]. ~~[८०]~~ जनवरी, २०००.

143

RDave

एलियन गन्ज़ालेस

माँ क्या, री! मानवता डूबी!
राजनीति के दावपेंच में मायूस-सी ममता जा डूबी!

कूटनीति के कुटिल खेल का मुहरा बन रह गया यह बच्चा
कोमल मन इस खींचतान में क्या समझे झूठा क्या सच्चा!
सुंदर ~~स्वांग~~ स्वांग सजाये सस्मित दिखती दानवता अपरूपी
माँ क्या, री! मानवता डूबी!

इधर-उधर फेंका जाता यह छोटा-सा, मासूम-सा शिशुमन
अबोध को यह उलझन देते बड़े बड़े क्यों सभी प्रलोभन?
इस चौराहे पर आ कर अब कहाँ जा रही जीवन-छकड़ी?
माँ क्या, री! मानवता डूबी!

कितने बच्चे अमेरिका से वापिस भेज दिये जाते हैं!
कितने ही बच्चे क्यूबा में भटक भटक कर मर जाते हैं!
आज वर्ष छह के बच्चे में आ बैठी यह कैसी नीति?
माँ क्या, री! मानवता डूबी!

• देखिए नोट।

144

[२८]. जनवरी, 2000

RDave

वतन का छूटना

वतन छूट रहा है,
छूट रहा है मेरा गाँव मुझसे।
जी नहीं,
वतन नहीं छोड़ रहा है मुझको,
मैं छोड़ रहा हूँ वतनको।
वतन छूट रहा है।

वतन,
जिसकी भूमि है आर्द्र,
हृदय-की-सी,
ज़रा-सा कुरेद दिया
उसके अंग के किसी भी अवयव को,
जलबिन्दु निकल आती हैं बाहर
अश्रुबिन्दु-सी!
वतन से पड़ता है वियोग में,
वतन छूट रहा है।

कैसा सहृदय है वतन अपनों के लिये!
कैसा संगदिल हूँ मैं भी वतन के लिए!
बड़ी कठोर और तीक्ष्ण है मेरी हृदयभूमि,
राक्षसी शिलाखंडों से भरी हुई!
145 जिस वतन ने मुझको इतना प्यार ~~किया~~, दिया,
दुलार दिया,
(जैसे वह मेरी माँ ही न हो!),
जिस वतन ने मुझको नया जीवन दिया,
स्नेह दिया,

(९८५)

RDave

वतन का छूटना

(जैसे वह मेरा पिता ही न हो!),
जिस वतन ने मेरा उत्कर्ष करवाया,
गौरवान्वित करवाया,
(जैसे वह मेरा अभिभावक ही न हो!),
उसी वतन को छोड़कर जा रहा हूँ आज मैं
निर्ममता से
निर्दयता से
कृतघ्नता से,
एक कपूत की तरह!
वतन छूट रहा है।

यह वतन क्या है, बरगद का पेड़!
एक सुन्दर घोंसला बनाया था मैंने
जिसकी ऊँची डाली पर,
जीवन की शिक्षा-दीक्षा पाई थी मैंने
इस बरगद की शीतल छाँव में,
एक पूरा संसार बसाया था मैंने
इसी की पत्तियों-शाखों में।
अचानक ही
नहस-नहस कर दिया उसको
मन के मर्कट ने,
अज्ञान के अंध खोज में!
146 अब चल पड़ा हूँ अपना नष्ट-नीड़ हाथ में ले कर मैं
निर्ममता से
निर्दयता से
कृतघ्नता से,
एक कुलांगार की तरह! (१४६)
वतन छूट रहा है।

[८७].
[२९]. मार्च, 2002.

R.Dave

घर के दुश्मन

मेरे घर में ही मेरे विरोधी बसते हैं,
जिऊँ तो जिऊँ कैसे?
मेरे घर में ही मेरे दुश्मन रहते हैं,
निबटूँ तो निबटूँ कैसे?

कोने कोने में बिछे हैं मकड़ी के जाल
हटाऊँ कि दूसरे बनें!
रज-रज में रहते हैं मच्छरों के महीन बाल
नाश करूँ कि नये जन्में!
चींटियाँ घूम रही हैं छोटी-बड़ी विकराल
मारूँ कि नई सेना विशाल!
कदम कदम पर मिलता काल कराल!
बचूँ तो बचूँ कैसे?

जिसको बड़ा किया पाल-पोस कर
उस शरीर ने भी नहीं किया नमक हलाल!
अंगोपांग के ~~विद्रोह~~ विद्रोह से हो गया हाल बेहाल,
जाने क्या होगा हाल-हवाल!
हृदय भी नीति-नियम तोड़ता रहता है
बेढंगा चलता रहता साल-व-साल!
रोम-रोम ने मचा रखा है भूचाल,
सँभालूँ तो सँभालूँ कैसे?

147

मेरे घर में ही मेरे विरोधी बसते हैं
जिऊँ तो जिऊँ कैसे?

[८८].
[९०]. मई, 2003.

(१४७)

Rbave

मन की गूँज

मन ही मन तू गुन ले, भाई! प्रकाश मत कुछ बोल
मन ही मन स्वर भर ले, साँई! बाहर गूँज न खोल

मन की दुनिया दुनिया तेरी, तू मन है, मन तू
अंतरपट को खोल, झाँक, जीवन का कर ले मोल
तू बाहर गूँज न खोल

शादी की शहनाई के-से बसुरे सुर मत डोल
अमृत-से उर के गाने में संजीवन-रस घोल
तू बाहर गूँज न खोल

गुन गुन कर चुन ले तू मोती, जीवन के अनमोल
शान्त स्वरों में भीतर ही तुरीयावस्था में डोल
तू बाहर गूँज न खोल

[८६].
[३२]. जुन, २००३.

148

R.Dave

उदासीन

अब हम सब तटस्थ हो जायें
उदासीन हो कर जीवन का धर्म, मृत्यु का मर्म समझ लें
अब हम सब तटस्थ हो जायें

अपने अपने होते भी सब लगने लगे पराये मन को
मिथ्या सपना कह कर ठुकराये जीवन के यथार्थ धन को
उपाधियाँ तो होती हैं, फिर भी हम व्यथा-मुक्त हो जायें
अब हम सब तटस्थ हो जायें

"द्वन्द्वोंमय मानव-जीवन है", आधी-अधूरी बात हुई
जो केवल मन की उपज, छूटना उससे, यह बात हुई?
विविधमुखी जीवन जीते हम सब समरस सच में हो जायें
अब हम सब तटस्थ हो जायें

[९०].
[९२]. सितंबर, २००१.

149

R Dave

कविता

[कवयित्री सुश्री निर्मला जी ने कहा : "मेरी कविता तो खाली होती है!"]

कविता कभी खाली नहीं होती,
यदि खाली है तो वह कविता नहीं होती,
कविता कभी खाली नहीं होती।

कविता सदा भरी भरी होती है, –
भावनाओं की हरी-भरी भावभूमि से
आर्द्र; हृदय-वृक्ष से चिपकी हुई
ऊर्मिलताओं से आच्छन्न; मनोनभ में फैले
चिन्तन के चाँद-सितारों से संचित।
कविता सदा भरी भरी होती है।
कविता कभी खाली नहीं होती।

कविता कभी मूक नहीं होती,
यदि मूक है तो वह कविता नहीं होती।
जब मूक लगती है कविता,
मुखर ही रहती है तब भी वह
भीतर ही भीतर; मौन-मुखर ध्वनि में!
कविता सदा बोलती रहती है लोकबोली में,
गुनगुनाती रहती है रातदिन वह
अस्खलित धाराप्रवाह गुंजन में।
गूंजता रहता है छंदोलय का संगीत
150 सदा संसार में, शब्दों के सुरताल के साथ।
घोलती रहती है कविता अगद-रस जीवन में।
कविता कभी मूक नहीं होती,
कविता कभी खाली नहीं होती!

[९२].
[९३]. दिसंबर, २००१.

(a.५०)

RDave

भीड़ से घबराहट

भीड़ से घबराता हूँ मैं!
डर यह नहीं कि जेब कटेगी,
मुझको भीड़ कुचल डालेगी।
सच तो यह कि
नर्वस हो जाता हूँ मैं,
भीड़ से घबराता हूँ मैं!

भीड़ में चलते चलते मैं लोगों को देखा करता हूँ
कारें, ट्रक, सब-वे ट्राफिक, हो त्रस्त ताकता रहता हूँ
जाने किस रास्ते से आया और कहां चल देता हूँ!
भीड़ से घबराता हूँ मैं!

एक के आगे, एक के पीछे, एक के बाद, एक के साथ
धक्के देते, धक्के खाते, निजी जाल में उलझे साथ
मैं भी जंग-जीवन में प्राणों की बाजी लगाता हूँ
भीड़ से घबराता हूँ मैं!

भीड़ में फँसकर गुमसुम होकर सोच-समझ खो देता हूँ
भीड़-विश्वरूप-दर्शन से मैं भयविभोर हो जाता हूँ
आदि, अन्त और मध्य-हीन की स्तुति करने लग जाता हूँ
भीड़ से घबराता हूँ मैं!

151

[९२].
[~~९०~~]. नवम्बर, २०००.

Rdave

साल मुबारक

सब को साल-मुबारक हो !

नया दिवस लाया है अपने साथ नया निर्दोष बरस
शिशु-सा सुन्दर यह मासूम सदा सबको मंगलमय हो
सबको साल-मुबारक हो !

नई सभ्यता के प्रकाश ने चकाचौंध की जग-आँखें
मानव-संस्कारों का उस पर महीन-सा इक ढक्कन हो
सबको साल-मुबारक हो

मानव की, मानव-समाज की, मानवता की उन्नति के
पथ पर जो सूरज गावे, उन मूल्यों का गायन हो
! सबको साल-मुबारक हो

[०३].
~~[०५].~~ जनवरी, २००३-

152

RDave

वसन्तोत्सव

~~[अमेरिका में]~~

रिमझिम रिमझिम नर्तन करता वसन्त आया, री!
राग-रंग से सबको मिलाता वसन्त आया, री!

रंगमंच पर प्रकट हुआ अवतार स्कंक का योगी,
घूम रहा निर्भीक निपट, निश्चिन्त मनु निर्मोही!
अमोघ है ब्रह्मास्त्र गंध का, इससे बचकर रहना, री!
रिमझिम रिमझिम नर्तन करता वसन्त आया, री!

वसन्त के रागों में राग मिलाने आया रोबीन,
मौन-मुखर वाणी से भरता सुर में सुर है पलछिन।
टिक् टिक् ताल बजाता ~~छि~~ छिपकलियों का झुंड भी आया, री!
रिमझिम रिमझिम नर्तन करता वसन्त आया, री!

हल्की हल्की बूंदें गातीं रूमानी मस्तानी धुन,
पवन-चलित फूटी कोंपल भी अलापती नवजीवन-धुन!
डैफोडिल्‌ने भी सुन सस्मित सिर अपना हिलाया, री!
रिमझिम रिमझिम नर्तन करता वसन्त आया, री!

पूरब की कोयल की अद्भुत दंतकथा मरुत ले आया,
बफ़ेलो बर्ड की मादा ने भी सुनकर उसका लोभ उठाया,
153 चुपके से उसने अंडा *ब्लुजे के नीड़ में छोड़ा, री!
रिमझिम रिमझिम नर्तन करता वसन्त आया, री!

नोट: स्कन्क (Skunk); एक छोटा जानवर, जो अपनी रक्षा के लिए दुर्गन्ध-युक्त और कुछ ज़हरीला प्रवाही छिड़कता है।

(OVER)

R.Dave.

बसन्तोत्सव

[अमेरिका में]

बफ़ेलो बर्ड : Buffalo Bird, Brown-headed Cowbird : इस पंछी की मादा अपने अंडे दूसरे पंछियों के, विशेष करके, ब्लु जे के घोसलों में छोड़ आती है।

ब्लु जे : Blue Jay : एक अत्यंत सुन्दर पक्षी।

[१४].
[१६], अप्रैल, २००६.

154

RDave

सुख दुःख

सुख को सुख मैं नहीं समझता
दुःख को नहीं मैं दुःख
भेद नहीं आँसू-मोती में
समान अपना रुख़

यदि देखो तो स्थान प्रमुख
लेता जीवन में दुःख
पैदा होते ही पुकारता
शैशव अपना दुःख

और स्थान अंतिम भी लेता
मरणहार का दुःख
घर में भी मातम ही मातम
हँसता दुःख ही दुःख

किन्तु अन्त-आरंभ-मात्र से
कोई न होता प्रमुख
जीवन पूरा करता शासन
अपना सुख ही सुख

मेरा मन तो यह कहता है
155 कोई नहीं प्रमुख
निर्विकार-से कमल-पत्र [redacted] के
समान अपना रुख़

[९५].
[~~९७~~]. जून, 2003.

(१५५)

RDave

समझ का खंडहर

समझ खंडहर हो गई,
यह इमारत गगनचुंबी झपक में ही झड़ गई!
जिस तरह मीनार वैश्विक,
या हिरोशिमा नगर पर,
द्रुतगति अवकाश-पुष्पक,।
गगनभेदी नाद कर नभ से धरा पर ढह गई
समझ खंडहर हो गई

जिस समझ का द्वार मुख्य बुलंद रहता था खुला
जिस इमारत का बड़ा प्रांगण हरा रहता सदा
जिसके वातायन पवन-संदेश सुनते थे सदा,
और सुनकर सोचते, गुनते, सुनाते फिर नया
नींव उसकी खोद, डावांडोल कोई कर गया
उपहास-सा करता गया, और एक धक्का दे गया।
निमिष में ही हाय! ढल गई
समझ खंडहर हो गई

हम समझते, व्यष्टि और समष्टि का संबन्ध 'ऐसा'
हम समझते, संस्कृति औ सभ्यता का बोध 'ऐसा'
हम समझते, युद्ध, शांति, विनाश का है अर्थ 'ऐसा'
हम समझते, त्रास औ आतंक का चेहरा है 'ऐसा',
तब किसीने यह कहा, "ना, लो! मुखौटा पहन लो यह
मैं कहूँ यही सच है, समझे? मान लो, कर लो भरोसा!"
156 पलक में ही हाय! मिट गई
समझ खंडहर हो गई

(आगे के पृष्ठ पर)

Rbave

समझ का खँडहर

काटने चक्कर लगे अब समझ के प्रासाद में,
बेझिझक हो ढोंग घूमता, दंभ भी गृहकक्ष में,
हैं मुखौटे टहलते रहते हमेशा मस्ती में,
धूर्तता, पाखंड भी, जंगालियत भी, रंग में।
नाच इनका चल रहा निर्लज्ज नासक ताल में,
बोझ़ यह न उठा सकी सब समझ, ढह गई रंज में,
यह ज़मीं भी हाय! फट गई,
समझ खँडहर हो गई

[१६].
~~[१८]~~. जुन, २००३.

157

RDave

दीवाली और क्रिसमस

बड़ी उमंगें लेकर आई थीं हम इस दुनिया में
निराश हो मनुजों से, वापस चलीं अपनी दुनिया में
सुना, बड़ी पूजा होती संस्कारों की दुनिया में
देखा, नोंच रहे हैं मानव संस्कृति को दुनिया में

बघार होता है आदर्शों का दंभी दुनिया में
खाने मिलते सड़े स्वार्थ के टूकड़े इस दुनिया में
दीप जलाने से क्या होता अंधी इस दुनिया में ?
दिल में काल-कराल अँधेरा फैला है, दुनिया में

बीस साल क्या नहीं पटाखे रुक सकते दुनिया में ?
बीस साल नहीं शौक-शराबे रुक सकते दुनिया में ?
बीस साल सबका मंगल हो नहीं सकता दुनिया में
बीस साल नहीं भलाई सबकी हो सकती दुनिया में ?

बना रखा संयुक्त राष्ट्र का संघ बड़ा दुनिया में !
नहीं कर सकते, अरे! सरल प्रस्ताव एक दुनिया में !
आज चलीं वापस हम दोनों बहनें निज दुनिया में
दीवाली-नाताल मनाना हम बिन तुम दुनिया में

नया साल भी तुम्हीं मनाना खुशी खुशी दुनिया में
आज़ादी का जश्न, सभी त्यौहार, सड़ी दुनिया में
नई संस्कृति की किरणें फैलेंगी जब दुनिया में
158 आयेंगी वापस, तब तक अल्-विदा रही दुनिया में

[310].
[55]. दिसम्बर, २००३.

Above

एक जीव की जीवन-यात्रा

आया था जब मैं यहाँ पृथिवी पर, कोई भी साथी न था
छोटे जन्तु तरह शिशु विवश था, असहाय, अनजान था
रोया, चिल्लाया, पटक पटक सिर, सुनता न कोई भी था
मानव तो है खैर! स्वार्थपुतला, ईश्वर भी साथी न था
शुरू की थी जीवन अरु मरण की खोज तब से
चढ़े-उतरे क्रमशः नितनवीन सोपान तब से

बिनु भगवान बीता दिया कुछ समय, क्या मस्त जीवन रहा!
फिर हुआ ईश्वर-प्रवेश मन में, ईश्वर-बसेरा हुआ
माला-फेरन, ध्यान के धरन में, कुछ वर्ष जीवन करा
जीवन के सब मर्म को समझने ईश्वर-सहारा लिया
रही जारी जीवन अरु मरण की खोज तब भी
चढ़े-उतरे काफ़ी नित नवीन सोपान तब भी

ईश्वर ने दीं भेज युग्म भगिनी आस्था व भक्ति यहाँ
आया ज्ञान भी कुंभ एक नव ~~[illegible]~~ के गोपन रसों से भरा
किन्तु प्यास बुझी न भूख मन की, चलता रहा मैं सदा
तब लाया नवयुग चिन्तन-मनन, भगवान पीछे छूटा
रही जारी जीवन अरु मरन की खोज तब भी
चढ़े-उतरे सौ सौ नित नवीन सोपान तब ~~भी~~ भी

159 आया जब ईश्वर न था जीवन में, असहाय अनजान था
फिर आया ईश्वर, परन्तु मन ~~में~~ को ना शान्ति, संतोष था
तब छोड़े बन्धन सभी, मन हुआ स्वायत्त, मुक्ति मिली
जीवन के सुरहस्य की नई नई परतें भी खुलने लगीं
नहीं पूरी हुई है यह चिरंतन खोज अब भी
चढ़ेंगे-उतरेंगे नित नवीन सोपान अब भी

१८
फरवरी, २००४.

(१२३)

RDave

शान्ति-मंत्र का गान

प्रिय! चलो आज हम सब मिल करके शान्ति-मंत्र का गान करें
शान्ति के सुस्थिर सागरजल का मधुमय रसपान करें

बहुत दिनों से हृदय हमारा व्यथित रहा, बेचैन रहा
जीवन के झंझावातों में मन का पत्ता उड़ता रहा
शीतलता के सागर में "शाश्वती समा" तक स्नान करें
शान्ति-मंत्र का गान करें

रची सभ्यता है मनुष्य ने कुटिल, जटिल, बर्बर आँधी
लड़ता रहा परस्पर हो गुमराह, खोई मन की शान्ति
जीवन की आपाधापी से अब हम अपना त्राण करें
शान्ति-मंत्र का गान करें

शान्ति-मंत्र की मूक ध्वनि से गूँज उठे यह जग सारा
गगनभेदी उसके निनाद से नाच उठे ब्रह्मांड भरा
ब्रह्मांडों के पार पहुँच कर सबको शान्ति-दान करें
शान्ति-मंत्र का गान करें

[९९], मार्च, २००४.

160

RDave

माँ से दूर

याद है, मुझे, अब भी याद है
अकल लीला माँ प्रकृति की,
अब भी याद है।
माँ की गोद में पला हूँ मैं
फूला-फला हूँ मैं,
गोद में ही समझे हैं मैंने इन्द्रधनुषी रहस्य
जीवन और मृत्यु के।
भूलूँ कैसे?
याद है, मुझे, सब कुछ याद है

कुदरत में ही जन्मा था जीवन मेरा
कुदरत में ही रमा था जीवन मेरा
कुदरत में ही रँगा था जीवन मेरा।
आज भी है आँखों के सामने,
मन के कंप्युटर में जैसे डिजिटल चित्रप्रवाह!
वे धूलिधूसरित सड़कें गाँवों की,
वे धीरगति से चलती बैलगाड़ियाँ,
सरिता के वे शान्त नीर
और उनमें उठती लहरों का प्रेमालिंगन!
सुखदुःख के दाता होते हैं सब स्मरण!
याद है, मुझे अब भी याद है

161

पत्तों की मर्मर ध्वनि से कलकलित
पेड़ों की स्वप्निल छाया में कटतीं रातें,
उन उडुगणों को गिनतीं आँखें,
जिनकी गणना कभी नहीं होती थी पूरी! (१६१)

R. Dave

माँ से दूर

ग्राम-पितामह स्वरूप वह बूढ़ा बरगद,
और पास में बहती निर्झरिणी की झंकार को
अपने मधुगानों में समेटते पक्षिवृंद!
वन-उपवन की सघन छाँव में दौड़ती हुई
पशुओं और मानवों की
समान्तर पगडंडियाँ!
गाँव की सीमा पर,
उसी बरगद की जड़ के तकिये पर सिर रख कर,
पालतू पशुओं के साथ
ढलती दोपहरी में आराम करना,
और भी जाने क्या-क्या करना!
भूलूँ कैसे?
याद है मुझे, सब कुछ याद है

ऊधम मचाना अपने घर के आँगन में
और छिप जाना अपनी जननी के मैले आँचल में!
बन जाना मिट्टी,
मिट्टी के कण-कण से मिलकर,
मिला देना सृष्टि-संगीत के स्वर में स्वर!
याद है, मुझे अब भी याद है

162 फिर अचानक प्रविष्ट हुआ मैं
नई सभ्यता के खोखले माहौल में,
विकास का मुखौटा पहन कर,
जैसे किसी भूल-भुलैया में!

Rbaye

<u>मॉं से दूर</u>

चलता ही गया,
चलता ही गया उसकी चकाचौंध में
सदियों तक।
बहुत दूर आ गया हूँ मैं अब अपनी मॉं से,
पर भूला नहीं मुझको उसका वह आर्द्र चेहरा
अब तक!
वे स्नेह-सिक्त आँखें,
मुझको जैसे ताक रही हैं,
विथा बिछोह की गा रही हैं!
और इधर नींद में पड़ा मैं,
मिथ्या सपनों में विचरता मैं,
अपने अहम् का विष-भोजन करता मैं!
चौंक उठता हूँ मैं कभी कभी बेर-अबेर,
जैसे कोई महाकाय डायनासोर,
जिसकी संवेदना जागती है सदियों पर!
और तब आता है मन में,
दौड़ के चला जाऊँ अभी उसके पास,
और छुपा लूँ अपना अपराध
उसकी ममतामयी गोद में!

[२००]. मई, २००४.

163

RDave

झरना - २

झरना सूख गया है।
पूरा बह नहीं सका कभी वह
धारा दुबली निकली थी, पर
हो गई है अब शव-सी निश्चल।
झरना सूख गया है।

चट्टानों को तोड़ तोड़ कर बना लिया था रास्ता अपना
सदियों के संघर्ष बाद था तोड़ सका बन्धन वह अपना
देख दिव्य दुनिया बाहर की पुलक उठा था, जैसे सपना
प्रचंड ध्वनि कर, नाच उठा वह।
झरना सूख गया है।

था उसको, सरिता बन जाऊँ, जनपद-दरसन पाऊँ
अपने जीवन-जल से अग-जग को अमरित दे जाऊँ
करके जीवन सार्थक, प्रिय सागर से मैं मिल जाऊँ
झूम झूम छल-छलक उठा वह
झरना सूख गया है।

किन्तु नहीं पूरी की कुदरत ने उसकी अभिलाषा
आँधी के प्रलयंकर प्रकोप से तोड़ी प्रत्याशा
तोड़ के निकला था जिनको, चट्टानों ने ही फाँसा!
सरस्वती हो गया है अब वह
164 झरना सूख गया है।

[१०१].
[~~२०३~~]. जुन, २००४.

(१६४),

R.Dave

झरना - २

फिर बहने लगा यह निर्झर!
युग-युग से जो बन्दी बना था
प्रस्तर के पहरों में फँसा था
कारागार न तोड़ सका था,
मुक्त हुआ जल निर्मल।
फिर बहने लगा यह निर्झर!

भीषण झंझावात चले थे
प्रचंड प्रस्तरपात हुए थे,
शिला-शिला के स्तर के स्तर से
दिशा-द्वार सब बन्द हुए थे।
पर सकता है रोक कौन, जो
उत्स पड़ा मुक्ति का भीतर?
विद्रोही की तीक्ष्ण आह से
ध्वस्त हुए भौतिक सब बन्धन!
आज़ादी का लिए अमर जल
बहने लगा यह निर्झर।
फिर बहने लगा यह निर्झर!

पल पल, कल कल, छल छल, करता
नाद-निनाद, चला पहाड़ से
संगीत, नर्तन, संकीर्तन करता
165 वह निकला तीव्र गति से,
मध्यम धारा धीर धरा पर,

(१९५२)

[OVER]

RDave

झरना - २

लुप्त सरस्वती जैसे प्रकटित
हो अग-जग में भरती सुधारस!
कभी मंद्र तो कभी मध्य
सप्तक में तान सुनाता नवरस,
बहने लगा यह निर्झर।
फिर बहने लगा यह निर्झर!

[902].
~~[2..]~~ जून, २००४.

166

RDave

नींद

यह नींद मुझे सोने नहीं देती,
हठी नींद!
यह नींद मुझे सोने नहीं देती!
पलकों पर आ कभी बैठती
कभी प्रवेशती आँखों में, पर
भीत मृगी-सी भाग ही जाती!
नींद मुझे सोने नहीं देती।

पलकें अपना धर्म पालती
रह-रह द्वार बन्द कर देतीं
पर यह बैरन नींद भला क्यों
पलकों पर से शीघ्र: उतर कर
नयन-त्याग करके ही रहती!
नींद मुझे सोने नहीं देती।

सदियों से हूँ रही जागती
सोती हूँ नहीं सोने देती
थक कर मनने आज्ञा दी
सोने की, उसको भी ठुकराती!
अपने मन की नहीं बताती!
नींद मुझे सोने नहीं देती।

167 झगड़ा क्या, किससे, न बताती
विरोध क्या, किससे, न जताती

(१९६७)

Revise.

नींद

कहा जागरण ने तब आखिर,
सपनों का परिहार चाहती!
नयनों में इसीलिए न आती!
नींद मुझे सोने नहीं देती,
हठी नींद!
यह नींद मुझे सोने नहीं देती।

[१७०३]. अगस्त, २००४.

168

RDave

संकल्प-सिद्धि

संकल्प-सिद्धि-क्षण आ पहुँचा
संकल्प का पूर्ण विधान होगा
सिद्धि रहित रिद्धि अपूर्ण होती
सिद्धि रहित रिद्धि विशुष्क होती

जिजिविषा की हद एक होती
सीमा कदापि नहीं लांघी जाती
समय समय में यही फ़र्क़ होता
आया कभी जीव, चला भी जाता

समय हुआ, जीवन-रंग रेले
समय हुआ, जीवन-अंत झेले
समय-समय जीवन-जाल फेंके
समय समय जाल वही समेटे

न कोई मारण, नहीं व्याधि ~~होती~~ होगी
यह जीव की आप उड़ान होगी
हृदय स्वयं तत्क्षण ही रुकेगा
संकल्प-सिद्धि-क्षण आ पहुँचा

[२०४]. अक्तूबर, २००४.
~~अक्तूबर, २००४.~~
~~२००३ (??)~~.

169

RDave

त्सुनामी

महासिन्धु के हृदय के हिल्लोल-कंपन से उठती हुई
ये लहरें!
उठ उठ कर पृथ्वीपर पर प्रलय-ताण्डव करती हुई
ये त्सुनामि की मौजें!
फट क्यों नहीं जाता हृदय, देख कर
प्रकृति की पैशाचिक लीला?
जल क्यों नहीं जाता हृदय, सुन कर
जन-हत्यों की करुण चित्कार?
कैसी है यह प्रस्तर-शिला-सी कवि-हृदय-लीला?
टूट गई हैं करुणा की सैंकड़ों कगारें,
किन्तु मूढ़ मन किञ्चित् भी न हिला!

उदासीन है क्या कवि का मन?
उदासीन होने की दिशा में जब बदला जाता है मन,
(उदासीन तो वह नहीं हो सकता संपूर्ण)
संवेदनशील पर तब भी कम नहीं हो सकता।
सुखदुःख की त्सुनामियाँ उठती तो हैं
भावनाओं के ज्वार आते तो हैं
ऊर्मियों के स्पन्दन उठते तो हैं
शमन कर सकता है उन सबको वह
समा सकता है सब शान्तिसागर में वह
170 ठहरा अन्त में तो कविजीव वह!

पर हो क्या गया है आज के कवि को?
ताकता रहता है भावशून्य हो प्रलय को!

RDave

सुनामी

देखता रहता है
अपने बन्धु-बान्धवों के कर्म-कारनामे वह,
खड़ा रहता है
साक्षी बन कर विश्व के प्रांगण में वह।
क्या-क्या दुर्घटनाएँ होती हैं मानव-निर्मित,
क्या क्या अनहोनियाँ घटती हैं प्रकृति-प्रणीत!
कैसी स्वार्थ-परक जड़ता, कवि!
कैसी निर्लिप्त उदासीनता, कवि!
कितनी निर्मम संवेदन-हीनता, भाई!
कितनी क्रूर कापुरुषता, साँई!
मानो तुम कवि नहीं, कवि की छाँई!

क्षुब्ध हो गया कवि यह अप्रत्याशित वाणी सुन कर।
सोचा उसने,
फट क्यों न गया उसका पत्थर-हृदय?
आग क्यों न बन गया उसका हिम-हृदय?
तोड़ कर करुणा की कगारें
बह क्यों न निकला उसका जड़ हृदय?

और तब हो गये बन्द कवि के नयन,
हो गया वह ध्यानमग्न गहन।
171 खुल ~~क्ये~~ गई उसकी अन्तर्दृष्टि,
दिखने लगी स्वयं सारी समष्टि,
बीत गईं ऐसे ही कुछ घड़ियाँ तुरीयावस्था में,
परिणत कर दिया जिसने कवि ~~के~~ को ऋषि में,
ऋषि से आर्षद्रष्टा में! (969)

R.Dave

सुनामी

देख रहा हूँ जैसे कोई चित्रपट बन्द नयनों से,
चल रहा है जो पृथ्वी-पट पर, दिव्य नयनों से:

आ रहा है जैसे बूढ़ा शमशान साक्षात् फिर से
भयंकर भूकंप का रूप ले कर, के,
चीर देता है विवश समंदर का पेट भीतर से
प्रलयंकर गर्जन कर के,
जगाता है सोई सुनामी राक्षसियों को लत्ताप्रहार से
घोर अट्टहास करके,
और अस्थिर हो जाता है हमारा कवि
यह सब देखके,
देखता रहता है फिर भी धीर गंभीरता से
मन को दृढ़ करके।

छोटा गाँव, और गाँव का समुद्र-तट,
तट पर है जवान, आगन्तुक से अनजान!
निमंत्रण दिया आती हुई लहर को उसने,
खेल में, प्रेममग्न होते हुए।
और निगल लिया अपने प्रथम ग्रास को काली दुष्टा ने,
विजय-हुंकार करते हुए!

172 अंगड़ाइयाँ ले रहा था बान्दा आचेह,
गूँजती प्रभाती में मची थी खलबली,
फैला दिया जाल अपना डाइन ने उस पर,
जैसे हो कोई वह मछली!

(962)

R.Dave

सुनामी

और बनाकर नगर को अस्थिपंजर,
चल निकली अंदामान की ओर!
द्वीप के द्विप डूबे, परिवार के परिवार।

फिर दौड़ कर दूसरे ही क्षण
ध्वस्त कर दिया नागपट्टिनम् का पूरा ग्राम-परिवार,
किया दक्षिणेशिया पर क्रूर वार।
भागने लगा अफ्रीका।
पर बच न सका वह भी इस बार!

चिल्ला रहे हैं किसीके बच्चे इधर
अपने डूबे माँबाप की खोज में,
भटक रहे हैं किसीके माँबाप
अपने खोये बच्चों की खोज में।
पागल-सा बैठा है कोई परदेसी पेड़ पकड़ कर,
रो रहा है कोई मछुआ अपना सिर पटक कर।
क्या बचा है त्रिंकोमाली में?
किसको छोड़ा है हंबनटोटा में?
क्या बचा है भग्नावशेष में?
किसको छोड़ा है अस्पताल-खंडहरों में?
बचा क्या है समंदर के बाहर?
173 बचा क्या है समंदर के भीतर?
बचा है तो केवल एक उबलता आक्रोश,
बची है तो केवल एक करुण चीख,
बची है तो केवल एक असहाय दृष्टि,

(१८३)

(क्रमशः)

RDave

त्सुनामी

बची हैं तो केवल एक निराधार सृष्टि !
बसाओ संसार नया अब कंकालों का,
बसाओ नगर नया अब भग्नावशेषों का!
चिल्ला रहे हैं स्वयं छह हजार मील
पे 'त्राहि माम' कहते हुए,
चीख रहे हैं मृतामृत और आहत,
'त्राहि माम' पुकारते हुए!
खुल गईं आँखें कवि की ध्यान-निद्रा से,
रो उठा उसका उत्स अपनी खोखली मानवता पर!

तभी, अचानक ही,
लौटीं समुद्री त्सुनामियाँ अपने घर
अपनी धृष्ट ध्वंसलीला समाप्त कर।
हाहाकारों-चीत्कारों से नभ गया पूरा भर,
गूँज उठा हृदय-द्रवी आर्तनादों से संसार,
चुप हो गया सिन्धु लज्जापराध से
गूँजे शिशुओं का मुखर नाद सुन कर!
और उधर,
दूर सुदूर क्षितिज पर,
दिखते हैं दौड़ कर आते हुए,
नीच अट्टहास करते हुए,
174 रोग-बीमारियों के क्रूर लश्कर
महाभोज भोगने के अत्यानंद में चकचूर!

शमा न सका अपनी हृदयाग्नि को अपने भीतर अब
कवि,

RDave

त्सुनामी

समा न सका दुःख की त्सुनामियों को अपने भीतर अब
कवि,
बुझा न सका अपनी शोकाग्नि को धैर्य-सागर में अब
कवि !
फट गया उसका हृदय अब
जीवन की यह मृत्यु-लीला देख कर !
छलक उठी संवेदना उसकी अब
महा-प्रलय-काव्य-रूप धर कर !
बह निकलीं शत शत त्सुनामियाँ हृदय से
शान्त सुलेखक बनकर।
समेट लिये अंक में सारे क्रन्दन विश्व के
उसकी वाणी ने
सरस्वती बन कर।

[905]

[906]. दिसम्बर, 2004.

त्सुनामी (tsunami) : समुद्री भूकंप से उठती हुई ज्वार की राक्षसी लहरें।

ल्होंगो (Lhokngo) : इन्डोनेशिया का एक ~~नगर~~ गाँव।

बान्डा आचेह (Banda Aceh) : इन्डोनेशिया का एक ~~नगर~~ गाँव।

नागपट्टिनम : तमिलनाडु (भारत) का एक गाँव।

त्रिंकोमाली : श्रीलंका का एक गाँव।

175 हंबनटोटा : श्रीलंका का एक गाँव।

(965)

RDave

काव्य-विसर्जन

जब मैं जाऊँगा,
महाविसर्जन करके जाऊँगा अपनी कविताओं का
तमाम!
प्रेम से करके टुकड़े टुकड़े,
जैसे करता है कोई पवित्र प्रेमी
अपने स्नेह-सिक्त दिल के!

बहा दूँगा जलराशि में महासागर की,
कुछ को,
पहुँच जाएँगी पाताल-तल में ये।
उड़ा दूँगा फूँक-मात्र से विस्तीर्ण आकाश में
कुछ को,
गूँज उठेंगी पहुँचकर इंद्रपुरी में ये।
अग्निदाह दे दूँगा विराट विश्व के प्रांगण में
कुछ को,
बुझ जाएँगी अवकाश के पार वाले विश्वों में ये!

ये कन्यकाएँ क्वाँरी मेरी,
शीत-ऊष्ण हिमखंड जैसी ये,
मंद मंद मलयज ये मेरी,
पीत-रंगीन पत्तों की-सी ये,
नवप्रभात की ओसें ये मेरी,
बसन्त की मुस्कानों जैसी ये!
मृदु-मधुर, उग्र-कठोर

176 (१७६)

RSane

काव्य-विसर्जन

गोजबेलियाँ!
स्वप्नशील, सुसंस्कृत
सरस्वतियाँ!
प्रणय-पयोधि की ज्वाला में जलती,
अपने जगत्पति को समर्पित,
अपने जगत्पति से तिरस्कृत,
अपने जगत्पति से अस्वीकृत
ये परम पुनीताएँ,
ये प्राणप्यारी सुकन्याएँ!

हाँ, बस!
यही है इनका दोष,
एक जघन्य अपराध,
एक मासूम गुनाह!
जन्म लिया है मेरी कोख से जाने-अनजाने में
लिया गर्भ में गुप्त बसेरा जाने-अनजाने में!
मैं हूँ इनका पिता, और मैं ही हूँ माता!
मैं ही अरे! अर्द्धनारीश्वर!
मैं ही भाग्य-विधाता!
जीना असंभव मुझ बिन इनका,
मैं ही उनका गाता!
177 मैं उद्गाता!

जब मैं जाऊँगा,
महाविसर्जन करके जाऊँगा अपनी कविताओं का
तमाम!

[९०६].
[~~५०६~~]. सितंबर, २००५.

Rbave

लोककला

लोककला का मंचन करके खून किया जाता है उसका,
और ढोल पीटा जाता कि, किया जा रहा रक्षण उसका

मुक्त गगन, वन, मुक्त पवन औ' मुक्त पंछियों की चहचह,
मुक्त हँसी औ' अभिव्यक्ति का उत्स रहा जनपद उसका

रंगमंच के नीति-नियम में कलाकार-मन उलझा रहता
बड़े बाबुओं का संचालन, श्वास रूँधता है उन सबका

लोगों का क्या? सदा चाहिए उनको नया नया मन-रंजन
'प्रिमिटीव' लोगों को प्रोत्साहन देना धर्म खरा है उनका!

लोकगीत औ' लोकनृत्य मंचों पर कतई नहीं पनपते
हवा नागरी से धीरे धीरे दम घुटता जाता उनका

रक्षा करनी है यदि उनकी संस्कृति की, तो चलें उधर हम
मुरझा जाते पेड़ विवश, जब काट दिया जाता मूल उनका

हरेक का माहौल खास, रक्षा उसकी है धर्म सभी का
दंभ छोड़कर, समतल धरती पर संमिलन, कर्म सभी का

178

[१०७]. ~~[२०८]~~. दिसंबर, २००५.

RDave

कुसमय की कविता

कमबख़्त कविता को भी अभी आना था !
द्वार सभी जब बन्द हो गये,
आ खड़ी आलिंगन को !

समय नहीं यह पद्य का
समय नहीं रोमान्स का
समय है शुद्ध गद्य का।
द्वार अरे! अब बन्द हो गये।
चले सभी हम आस्वाद लूटने गद्य-भोज का !
इसी समय आना था बदनसीब को
प्रणय-लीला रचाने !
कमबख़्त कविता को भी अभी आना था !

बिना इत्तिला का धमकना !
कुछ भी नहीं विवेक-विनय और सोच-विचार !
इस लिए कि मैं कवि हूँ,
आ सकती है जब चाहे तब
कोई कविता मेरे द्वार ?

बुरा मत मानना, कविते प्रिये !
तुम सुन्दर भी हो, सुशील भी,
179 सुकोमल और स्वप्नशील भी,
पर समय समय की बात है,
प्रिये कविते!
नहीं कर सकता गद्य का भी निरादर मैं !
असमंजस में हूँ बराबर मैं !
नया पैरा ¶ कमबख़्त कविता को भी अभी आना था !

[१०८].
(१७९) [११०]. दिसंबर, २००५.

R.Dave

जीवनलीला

जो छूट चुका सो छूट चुका, जो बचा-खुचा वह अपना
जो निकल गया सो निकल गया, मुट्ठी में रहा वह अपना

जनम जनम का क्रन्दन करके प्राणवायु थी पाई
वह भूल गया सो भूल गया, बचपन जो बचा वह अपना

शैशव के कमनीय कुसुम, नन्हें खगबाल किलकते
वह खेल गया सो खेल गया, यौवन जो बचा वह अपना

जीवन की महकी फुलवारी, परिवार पूरा सुरभित था
जो उजड़ चुका सो उजड़ चुका, वार्द्धक्य मिला वह अपना

यौवन ने जरा का रूप लिया, संध्या का साज निराला
जो बीत चुका सो बीत चुका, ढलता सूरज वह अपना

दर्पण में सूरत देख फूले निज, सच ने भ्रम को तोड़ा।
जो टूट गया सो टूट गया, टुकड़ा जो बचा वह अपना

लुब्धक ने पूँजी बचाई थी, जग-प्रपंच ने आ लूटा
जो लूट चुका सो लुट चुका, जो शेष बचा वह अपना

180 बूढ़ेपन की मधुशाला पर जीवन-साकी का ताला
जो बन्द हुआ सो बन्द हुआ, अतिथि आया वह अपना

[१०७], जनवरी, २००६.

(१२०)

RDave

बूढ़े को बनाया

[एक समाचार: इस बार का विन्टर बहुत ही माइल्ड रहा]

बूढ़े को बनाया,
बूढ़े को खूब बनाया!

बड़ा सख्त है यह बूढ़ा,
कड़ा और अति क्रूर,
जीना कर देता है दूभर!
असह्य होता है उसका प्रकोप,
खुला रहता है सदा उसका तीसरा नेत्र,
जला देता है ठंडी आग में!
नटराज है यह!
किन्तु कितना भिन्न है नटराज से यह!
पर अच्छा बनाया इसको इस बार!
बूढ़े को खूब बनाया!

है तो यह बूढ़ा खँख,
पर कम नहीं किंचित् भी इसका जोश, क्रोध!
कैसा बवंडर उठता है इसके श्वासोच्छ्वास का,
क्या प्रचंड ताण्डव है इसका!
पेड़ भी गिरा देते हैं अपने पत्ते
मारे डर के,
181 डालियाँ भी ढँक लेती हैं अपने अंग
स्नो-चद्दर से,
और काँपती यह धरती भी ओढ़ लेती है सफेद चादर
अकल्प्य भय से!

R.Dave

बूढ़े को बनाया

हाहाकार मचाता है यह
भूगोल दबाता है यह
अमोघ वार करता है यह!
पर भला बनाया इसबार इसको!
बूढ़े को ख़ूब बनाया!

बात यह हुई हमारी,
युक्ति यह हुई हमारी,
समझा-बुझाकर भेज दिया दूसरे देश में
रूसों को हमने!
अठखेलियाँ करके प्यारी पवन को भेज दिया
सागर पार क्षितिजों में हमने!
ऊधम तो बहुत मचाया बूढ़े ने,
(बेचारा!)
कड़ाके की ठंड को* भी आह्वान किया उसने,
पर नहीं बिगाड़ सका वह कुछ भी हमारा!
रह गया पाँव पटक कर बेचारा!
बूढ़े को ख़ूब बनाया!

[२२०]. फरवरी-मार्च, २००६.

182

(१८२)

R.Dave

बसन्त में वर्षा

सखि हे! बसन्त है या वर्षा आई ?
चार ऋतुएँ अमेरिका में, पंचम कहाँ से आई ?
बसन्त है या वर्षा आई ?

आती है हर साल प्रकृति पुष्प-वस्त्र धारण कर
सुरभिमय पुष्पों से, हरियाली से साज सजा कर
किसने भेजा धानी साड़ी आई उसे पहना कर ?
पँचम कहाँ से आई ?

बसन्त की रंगीन लीला का अब भी कोई अन्त नहीं
कोंपल फूटी, कलियाँ बिकसीं, रंगसृष्टि का अन्त नहीं
किसने रचाया खेल परन्तु बारिश का भी अन्त नहीं!
पंचम कहाँ से आई ?

मृगशावक अब भी आते हैं, घर में, रंगीन गाते हैं
स्कन्क अभी दुर्गन्धि छिड़कते, फूल खिले हँसते हैं
किसने जादू-खेल रचा है? बसन्त-वर्षा मिलते हैं!
पंचम कहाँ से आई ?

पत्तों पर हैं बूँदें गिरतीं, गीत नये बनते हैं
मेघगर्जना के तालों में पंछी गान करते हैं
183 किसकी लीला? देखो! सुंदर सुंदर दो मिलते हैं!
पँचम कहाँ से आई ?

[OVER]

R.Dave

बसन्त में वर्षा

विला

निकली थी अभिसार रचा के भारत से यह नारी
अब समझा! है परम मिलन में परम अर्द्ध-नर-नारी!
किस अनंग की लीला से यह दिव्य मिलन की पारी?
पंचम कहां से आई?

[१९९]. 2006.

184

Rdave

घटश्राद्ध

मैंने निज घटश्राद्ध कर लिया,
निज आत्मा को मुक्त कर दिया!

किसी अंत्यज से भाव हो गया,
और भाव से प्रेम हो गया।
ब्राह्मण हो मैं भ्रष्ट हो गया,
समाज से परिभ्रष्ट हो गया!
पाप घड़े में आज बहा दिया!
मैंने निज घटश्राद्ध कर लिया।

शास्त्रों की बातें नहीं जानी,
स्मृतियों की आज्ञा नहीं मानी,
कानून की रक्षा नहीं चाही,
न्याय-दया की भीख न माँगी।
शाप नदी में शीघ्र डुबा दिया!
मैंने निज घटश्राद्ध कर लिया।

बहिष्कार कर दिया हमारा
समाजने, परिवार-जनों ने,
पर नवयुग, नवसमाज की
निर्मिति में केन्द्रित ध्यान हमारा।
घर में भेदाभेद भर दिया!
185 मैंने निज घटश्राद्ध कर लिया।

[११२]. अगस्त, २००६.

R.Dave

कवि जयदेव के प्रति

नदी जब बाँध बन जाती है महाकाय,
बन्दी बन जाता है पूरा बहाव उसका,
मैला हो जाता है पूरा आँचल उसका।
कलुष आ जाता है उसके मुरव में,
उथल-पुथल मच जाती है तब प्रकृति में,
नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है समस्त जीव-सृष्टि,
जड़-चेतन।
उन्मूलित हो जाती है
संस्कृति, सभ्यता और शिल्प-स्थापत्य।
भरने लग जाती है कूड़े-कचरे से
उसकी हृदय-सृष्टि!
नदी जब बाँध बन जाती है महाकाय!

इच्छा जब ग्रन्थि बन जाती है गैंग्रिनी,
विचार जब ग्रन्थि बन जाता है गैंग्रिनी,
मैला हो जाता है तब पूरा मस्तिष्क मनुज का।
कलुष आ जाता है तब उसके वाणी-विधान में,
उथल-पुथल मच जाती है उसकी प्रकृति में,
नष्ट-भ्रष्ट हो जाती है समस्त जीव-सृष्टि
जड़-चेतन।
उन्मूलित हो जाते हैं तब
संस्कृति, सभ्यता और जीवन-स्थापत्य।
186 भरने लग जाती है कूड़े-कचरे से
उसकी हृदय-सृष्टि!
इच्छा जब ग्रन्थि बन जाती है, गैंग्रिनी,
विचार जब ग्रन्थि बन जाता है गैंग्रिनी!

(२-८८)

R.Dave

कवि जयदेव के प्रति

आह्वान है तुम्हारा,
हे प्रिय कवि जयदेव!
हो रहा है अशुद्धि-पयोधि-जल निमज्जित
जीवन-वेद, हमारा!
तुम आओ!
और हो जाओ प्रस्तुत
एकादशावतार की संरचना को!
आह्वान है तुम्हारा!

नदी अब बाँध बन गई है महाकाय!
इच्छा अब ग्रन्थि बन गई है गैंग्रिनी!

[१२३]. अगस्त, २००६.

187

RDave

मेजर उपेन्द्र सिंह और लाल बहादुर शास्त्री

[१९६५ के भारत-पाक युद्ध में घायल मेजर की
मुलाकात को स्व. शास्त्री जी]

"वीर कभी आँसू नहीं बहाते,
वीरों को आँसू नहीं शोभा देते,
मेजर साहब!
वीर कभी नहीं रोते,
सह लेते हैं हँसते हँसते,
झेल लेते हैं,
मर मिटते हैं।
वीर कभी आँसू नहीं बहाते।
मेजर साहब, देखो!
गर्व करती है,
इठलाती है,
भारतमाता तुम पर।
जवान बेटा निकला वीर उसका,
कर दिया जिसने ऊँचा सिर उसका!
मेजर साहब!"

× × ×

"ये आँसू नहीं हैं,
पानी हैं ये मेरे उर की,
शास्त्री साहब!
मेरे आँसू गूँगे नहीं हैं,
मेरे आँसू मुखर-मौन की बोली हैं।
188 ये आँसू हैं स्वर्णाक्षर में अंकित
मेरी लाचारी की करुण कहानी, हे
प्रधान-मंत्री जी!
नहीं हैं ये मेरे ज़ख़्मों की शिकायत,
नहीं हैं ये भी मेरे छालों की शिकायत।

RDave

मेजर उपेन्द्र सिंह और लाल बहादुर शास्त्री

देश का सबसे बड़ा अगुआ
चलकर खुद यहाँ आया
हो कर दुःख में समदुःखी।
और मैं एक सैनिक मामूली
सलाम भी नहीं करता उठकर!
कितना धृष्ट और अविवेकी,
प्रधान-मंत्री साहब!
यही शिकायत कर रहे थे आँसू,
सज़ा का तकाज़ा कर रहे थे आँसू!"

× × ×

गद्गद् हो गये शास्त्री जी तब,
लाल बहादुर लाल हुए तब!
दर्शन करने उस सैनिक के
दौड़ पड़े दो आँसू!
नयन-कोर में अटके!

× × ×

मिल गये तब दोनों के हिये गलकर,
अश्रुरूप से मौक्तिक-रूप धारण कर!

[१२४] सितम्बर, २००६.

189

Rdave

सुख और दुःख

सुख ही सुख है इस जीवन में
दुःख का एक रजकण भी नहीं है
आँसू हैं, पर सिक्त हैं सुख में
दुःख का सूखा कण भी नहीं है

दुःख दिखता है, जैसे सँपोला डँसता रस्सी की लटकन में
परदा हटने पर भ्रम का, सुख दिखता सच के नवदरसन में
सुख ही सुख है इस जीवन में

लहरें उठने लगतीं दुःख की, जी घबराता भव-भँवरन में
अनुभूति होती सुख की, पाता निजको जब मोतियन में
सुख ही सुख है इस जीवन में

हमने केवल शूल चुने हैं, फँसे नहीं कलई फूलन में
मुक्ति मंजिल परमा हमारी, बँधे न क्षुल्लक के बन्धन में
सुख ही सुख है इस जीवन में

[१९२५]. नवम्बर, २००६.

190

RDewe गिद्ध से भयभीत सुदान के एक बालक की प्रार्थना

[पत्रकार स्व. केविन पोर्टर की पुलिज़र प्राइज़ प्राप्त एक तस्वीर के आधार पर]

हे ईश्वर! मोहे पार लगा दो
यह वीराना बंजर बिखरा सागर, मोहे पार उतारो।
हे ईश्वर! मोहे पार लगा दो।

लोग कहे हैं, कोई सुनो है, सबकी रक्षा करता
मरना टलता, जीना मिलता, उस तक बस पहुँचा दो।
हे ईश्वर! मोहे पार लगा दो।

ध्वज तो है कुछ ही दूरी पर, कैसे पहुँचूँगा उस तक?
हे दुःखत्राता! हाथ बढ़ा दो, मृत जीवन को जिला दो
हे ईश्वर! मोहे पार लगा दो

हाथ न पाँव रहे, जो रहा है, कुछ पतले धागे हैं!
पेट पीठ से मिलने धँसा है, संजीवनी पिला दो
हे ईश्वर! मोहे पार लगा दो।

त्रस्त नयन, हिय-भीत शिशु मैं, शून्य मति, अति व्याकुल
प्राणपति! ओ तारणहारा! नर-कंकाल बचा लो
हे ईश्वर! मोहे पार लगा दो

191 काल-कराल रहा मँडराता, गिद्ध चहुँ दिशि मेरी
मरण-भीत नवमीत! शीघ्र यमग्रास से मोहिं उबारो
हे ईश्वर! मोहे पार लगा दो

[१२६]. नवंबर, २००६

RDave

ये भी कुछ मनुष्य

शब्दों के पत्थर
जीभ के गोफन से फेंकने वाले
कम नहीं होते!
अपने से बदतर
दुनिया को समझने वाले
कम नहीं होते!

आदर्शों का नाम होता है,
काम नहीं!
हमदर्दी का नाम होता है,
दाम नहीं!
मूक, शान्त व्यापार को
शब्दबाण से बेधने वाले
कम नहीं होते!

जीवन के संवादी स्वर में विवादी भरना
अच्छा लगता है!
बसे संसार को वीराने में पलटना
प्यारा लगता है!
कबूतर की तरह कंठ फूला के चलना
न्यारा लगता है!

192

मधुमय मुखौटा पहन
विष उगलने वाले
कम नहीं होते!
शब्दों के पत्थर
जीभ के गोफन से फेंकने वाले
कम नहीं होते!

[१२७]. नवंबर, २००६.

RDave

स्वरों का मिलन

[redacted]

आज हुआ कुछ ऐसा, जो अक्सर होता आया है,
फिर भी नया, निराला, नंदन, आज हुआ कुछ ऐसा!

सुत था, गोद हमारी सूनी बिन सुता, सुन साँई!
चुपके से भर गई अचानक, आज हुआ कुछ ऐसा

आँचल फैलाकर बैठे थे नयन मूँदकर हम तो,
खोले तो मोती ~~[illegible]~~ को पाया, आज हुआ कुछ ऐसा!

[redacted]

गीतहीन मंज़िल जाने कब कहाँ कहाँ ले जाती!
बीच पंथ में सुमित मिला इक, आज हुआ कुछ ऐसा!

एक अकेले स्वर में कोई मिला गया स्वर अपना,
मिले सभी के स्वर में स्वर हैं, आज हुआ कुछ ऐसा!

[११८] २००५-२००६.

193

धरती का गान

[अमेरिकन इन्डियनों की नवाहो जाति का गीत]: अंग्रेजी का अनुवाद]

यह धरती सुन्दर है
यह धरती सुन्दर है
यह धरती सुन्दर है

पूरब के नीचे, यह पृथिवी, पूर्वाभिमुख यह पृथिवी
उसके शीश का शीर्ष सुन्दर है
उसके पाँवों के तलवे सुन्दर हैं
उसके चरण सुन्दर
उसके पाँव सुन्दर
उसकी देह सुन्दर
उसका सीना, उसके स्तन, उसके शीर्षपिच्छ
सब कुछ सुन्दर सुन्दर

पश्चिम के नीचे, यह व्योम, पश्चिमाभिमुख उसका मुख
उसके शीश का शीर्ष सुन्दर है
उसके पाँवों के तलवे सुन्दर हैं
उसके चरण सुन्दर
उसके पाँव सुन्दर
उसकी देह सुन्दर
उसका सीना, उसके स्तन, उसके शीर्षपिच्छ
सब कुछ सुन्दर सुन्दर

194

पूरब के नीचे, यह उषस्, पूर्वाभिमुख उसका मुख
उसके शीश का शीर्ष सुन्दर है
उसके पाँवों के तलवे सुन्दर हैं
उसके चरण सुन्दर
उसके पाँव सुन्दर
उसकी देह सुन्दर

धरती का गीत (2)

उसका सीना, उसके स्तन, उसके शीर्ष-पिच्छ
सब कुछ सुन्दर सुन्दर

पश्चिम के नीचे, सूर्यास्त की रक्तिम ज्वाला, पश्चिमाभिमुख उसका मुख
सुन्दर है
पूरब के नीचे, श्वेत श्वेत मक्का, पूर्वाभिमुख उसका मुख
सुन्दर है
दक्षिण के नीचे, नीले रंग की मक्का, दक्षिणाभिमुख उसका मुख
सुन्दर है
~~उत्तर~~ पश्चिम के नीचे, पीले रंग की मक्का, पश्चिमाभिमुख उसका मुख
सुन्दर है
उत्तर के नीचे, चित्ररंगी मक्का, उत्तराभिमुख उसका मुख
सुन्दर है
पूरब के नीचे, पवित्र आत्मा सहजाइरे,[1] पूर्वाभिमुख उसका मुख
सुन्दर है
पश्चिम के नीचे, पवित्र आत्मा बेकेहोज़ोन,[2] पश्चिमाभिमुख उसका मुख
सुन्दर है
पूरब के नीचे, मक्का की उड़ती रज, पूर्वाभिमुख उसका मुख
सुन्दर है
पश्चिम के नीचे, मक्का का बीरन कीड़ा, पश्चिमाभिमुख उसका मुख
सुन्दर है

195

यह धरती सुन्दर है
यह धरती सुन्दर है
यह धरती सुन्दर है

[१९५]. नवम्बर, २००६.

नोट:
1. पृथ्वी की पवित्र आत्मा (Spirit).
2. व्योम की पवित्र आत्मा (Spirit).
विशेष नोट भी देखिए।

शून्य से शुरुआत

शून्य से शुरुआत कर तू, शून्य से शुरुआत, बन्दे!
शून्य से शुरुआत कर
एक एक ही रटत जात, हो अंक-गणना मुक्त, बन्दे!
शून्य से शुरुआत कर

काल-गणना के भँवर में है फँसा यह जीव तेरा
काल-मुक्ति-तट ही तेरा लक्ष्य हो, हे बन्दी बन्दे!
शून्य से शुरुआत कर

अंक का अस्तित्व ही क्या? शून्य से ही अंक हैं
अपने ही बल पर नहीं वह एक डग जा पाये, बन्दे!
शून्य से शुरुआत कर

एक को यदि पा गया तो, दो दूजा ले जायेगा
छोड़ यह स्पर्धा-प्रतिस्पर्धा का पागलपन तू, बन्दे!
शून्य से शुरुआत कर

अंक-लोभी मृग की हत्या अंक ही करता सदा
शून्य बस है, ईश भी नहीं, सत्य गुन ले गुरु, बन्दे!
शून्य से शुरुआत कर

196

शून्य आदि काल तेरा, शून्य-व्योम-विहार कर
शून्य मिलना शून्य से, कर शून्य में निज विलय, बन्दे!
शून्य से शुरुआत कर

[१२०]. मार्च, 2006.

१८७ **जीवनसाथी के प्रति**

रंगों का संसार समेट कर उतर आई हो, रे! तुम यहाँ!
तुममें जितने रंगकोष हैं, मेघधनु में उतने कहाँ?
रंगों की अरुणोदय-वेला में रंजित मैं हो जाता हूँ
लक्षरंगिनी! रंगों के गोधूलि-काल में रँग जाता हूँ

भावों का मधुसागर लेकर लहर लहर तुम आई यहाँ!
तुममें जितने अमृतकोष हैं, सारे समंदर में वे कहाँ?
भावों के मदमस्त समय में अपनापन भूल जाता हूँ
हे रसराज्ञि! रस-चषकों में अमीरस के घूँट भरता हूँ

मुक्ति के शुचि मौक्तिकों को गूँथ गूँथ तुम लाई यहाँ!
तुममें जितने रत्नकोष हैं, अमरावती में वे सब कहाँ?
मुक्ति की साधना पथ में उदासीन हो जाता हूँ
एकप्राण! जीवन-मुक्ति के साधन में लग जाता हूँ

[२२१]. फरवरी, २००७.

197

RDave

यादों के बन्धन

यादों के बन्धन तू तोड़
सलास स्मृतियों की तू तोड़
यात्री तू मुक्ति-पथ का, मन उसी दिशा में मोड़
यादों के बन्धन तू तोड़

मधुमय सुरभि की निधि को लेकर आतीं ये यादें
अक्षय कोष आर्द्र गानों का ले आतीं ये यादें
सुखदुःख के तानेबाने में मन को बुनतीं यादें
सुखदुःख के तू हर्षशोक के तानेबाने तोड़
यादों के बन्धन तू तोड़

यादें कभी नहीं मरती हैं, मनुष्य मरता है!
स्मृतियाँ कभी नहीं मिटती हैं, मनुष्य मिटता है
कंधों पर यादों की गठरी लिये मनुज फिरता है
यादों के काफ़िले निकलते, अपनेको मत जोड़!
यादों के बन्धन तू तोड़

सुप्राप्य नहीं है, सुसाध्य नहीं है, सुगम नहीं, न सरल है
जीवन-मुक्ति का पथ, राही! सत्य सरल यह अटल!
जीवन की माया में रम, पर हो अलिप्त, अविचल!
मुक्तमना हो कर तू जीवन-मृत्यु के पट खोल!
यादों के बन्धन तू तोड़

198

[१२२] मई, 2006.

R.Dave

शुभ दिन

आज का यह शुभ दिन,
शुभ दिन आया है!
ऐसा लगता है,
लीन हो जाऊँ मैं,
और हो जाऊँ मैं
तन्मय, तद्गुण, तद्रूप,
इस शारदीया प्रकृति के रंगों के रंग में!
सो जाऊँ उसके परम पुनीत अंक में!
शुभ दिन आया है।

आज का यह शुभ दिन!
विश्व के प्रांगण में मंगल लाया है।
मन में ऐसा आता है,
दौड़ पड़ूँ,
मिल लूँ,
और हो जाऊँ एक प्रकृति के दिव्य गणों के साथ!
मीठी सौंध से सनी धरती की यह मिट्टी,
मिट्टी के निवासी ये जीव!
पेड़ों पर के पक्के
और पेड़ों से धरती पर पड़े
और जग से आँखमिचौनी खेलते
ये पत्ते!
199 रंग बदल कर चौकड़ी भरते ये हिरन,
डर कर छिपने को कूदते ये ससे,
और उनको पकड़ने की ताक में बैठी बिल्लियाँ!
खाने की खोज में गार्बेज खोलते रेकून और रीछ!

RDave

शुभ दिन

आत्म-रक्षा में अति-गन्धित प्रवाही छिड़कते स्कन्ध!
रातदिन अपने भाण्डागार में भोजन भरती छिपकलियाँ!
दूर्वा की हरी चद्दर पर रेंगते थे कमनसीब कीड़े,
और उनका महाभोज जीमते थे उडुगण!
प्रकृति के ये दिव्य गण!
आज उनमें है मेरा निमंत्रण!
शुभ दिन आया है।

आज का यह शुभ दिन!
महामहोत्सव का निमंत्रक यह दिन!
ऐसी धुन जगती है मन में मेरे कि,
दौड़ कर पहुँच जाऊँ वहाँ उनके पास,
और ले कर उनका हाथ में हाथ,
गाऊँ और नाचूँ उनके साथ।
मिला दूँ स्वर से स्वर
ताल से ताल
लय से लय
हृदय से हृदय!
शुभ दिन आया है।

आज का यह शुभ दिन!
आत्मैक्य का यह पवित्र छिन!
सृष्टि के इस महत्पर्व पर
हो जाये मनुष्य और प्रकृति
एक और अभिन्न।
और सब दिन हो जायें शुभ दिन!
शुभ दिन आया है।
(200) आज का यह शुभ दिन! [१२३]. नवम्बर, २००७.

R.Dave

मेधा

[अनुवाद]

हे मेधा! सर्वोत्तम मेधा! प्रथमा मेधा!
विस्तृत होती तुम आओ
मेधा, हे भगवति मेधा! तुम आओ
सदा वृद्धि करती, बढ़ती, तुम आओ
मेधा! देवि सुमेधा हे! तुम आओ
गोधन ले कर
अश्वों के धन समेत तुम आ जाओ
हे यज्ञरूपिणि! ब्रह्मरूपिणि! आ जाओ
सूर्य-रश्मियों के सह विस्तृत होती तुम आओ
हे मेधा! तुम आओ

मेधा, जो है ब्रह्मज्ञान से युक्त
मेधा, जो है ब्रह्मज्ञानियों से सेवित
मेधा, जो है ऋषिगण से संस्तुतित
मेधा, जो है ब्रह्मचारी-पुष्टित
मेधा, जो है देवगणों से रक्षित।
पुकारता हूँ
करता हूँ आह्वान उसी मेधा का मैं नित
हे मेधा! तुम ~~आ आओ~~ आओ

जिस भद्रा मेधा को ऋभुगण ने जाना-माना है
201 जिस भद्रा मेधा को असुरगण ने जाना-माना है
जिस भद्रा मेधा को ऋषिगण ने जाना-माना है
धारण करूँ मैं उस मेधा को अपने अंदर
मैं मेधी हो जाऊँ

RDave

मेधा

मेधावान बनूँ मैं
चहुँ ओर से आ जाओ मुझमें, हे भद्रे!
हे मेधा! तुम आओ

हे अग्नि!
जिस मेधा को मेधावी ऋषि जानते हैं
जिसको पा कर ऋक्‌दर्शन पा जाते हैं
सत्य समस्त सूक्तों में वे दरसाते हैं,
उसी मेधा से युक्त करो मुझको,
मैं भी मेधावी बनूँ
हे मेधा! मैं भी तुमको पाऊँ, तुम आओ
हे मेधा! तुम आओ

प्रतिदिन प्रातःकाल मेधा की स्तुति हम करते हैं
प्रतिदिन मध्यन्दिन मेधा की भक्ति हम करते हैं
प्रतिदिन सायंकाल मेधा की उपासना करते हैं
प्रतिदिन उस कल्याणी को अपने भीतर भरते हैं
सूर्य-रश्मियों से, अपनी वाणी से धारण करते हैं
हे मेधा! तुम आओ!

202 आज अरे! द्यौलोक ने मुझको मेधा प्रदान की है
देखो! मुझको पृथ्वीलोक ने मेधा प्रदान की है
विस्तृत अन्तरिक्ष ने भी मुझको यह प्रदान की है
अग्नि, सूर्य, जल ने भी, सबने मेधा प्रदान की है

R.Dave

मेधा

हे देवि! अब आ जाओ
हे मेधा! तुम आओ

[अथर्ववेद काण्ड ६, सूक्त १०८, ऋचा १-५,
और काण्ड १२, सू. १५३, ऋ. ३८.].

[१२४]. नवम्बर, 2007.

विशेष नोट देखिए।

203

RDave

आकृति

[अनुवाद]

१

आकृति देवी का शुभ स्वागत हो!
पुरस्तात् वह प्रस्थापित हो!
वह सुभगा, सौभाग्यशालिनी,
और है वह सौभाग्यदायिनी।
ऐश्वर्या वह, ऐश्वर्यशालिनी,
और है वह ऐश्वर्यदायिनी।
सूझ-समझदारी की देवी,
सूझ-बूझ-दायिनी!
आकृति देवी का शुभ स्वागत हो!

संशानमय है चित्त मम
आकृति माता उसकी परम,
दिया है जिसने उसे ज्ञान का मर्म!
इसी लिए करता हूँ मैं आकृति का आह्वान
इप्सित है मुझे स्वीकृति का वरदान।
वह सुहवा हो, आह्वान-सरला हो,
आकृति देवी का शुभ स्वागत हो!

अपने मन में प्रविष्ट होती मैं उसको देखूँ।
204 जिस दिशा को मैं जाऊँ,
उसी दिशा में साथ रहे, यह चाहूँ।
मैं ही उसके प्रेम का आलंबन होऊँ,
मैं ही उसका प्रेमपात्र
वह एक-मात्र मेरी ही हो,
वह केवली हो!
आकृति देवी का स्वागत हो!

R.Dave

आकूति

हे बृहस्पति!
तुम हो अनन्य निष्ठा के देव,
भक्ति के, स्वार्पण के देव,
सूझ-समझदारी के अधि देव,
जग-पालक, जग-रक्षक देव।
आओ आकूति सह तुम,
हे बृहस्पति!
आओ न आकूति सह तुम!
बनाओ हमको सुभग, ~~[illegible]~~ ऐश्वर्यवान,
करते तुम्हारा हम आह्वान!
स्वीकार करो यह हवि,
हो जाओ सुहवा!
स्वीकार करो आह्वान!

२.

मेरे मन की कामनाएँ पूर्ण हों!
सत्य और सत्य आकूति प्राप्त हो!
पुष्ट पशु, ~~स~~ रसपूर्ण अन्न, यश,
विद्या औ धन की देवी श्री,
सभी प्राप्त हों!
और इनके सह पूर्ण सम्मान!
205 ये सब मुझमें आहुत हों,
मुझमें ये सब स्वाहा हों,
ये सब मुझको प्राप्त हों!

RDave

आकूति

४

सदा सच्ची भावना मेरे मन में रहे!
सदा सत्या आकूति मेरे चित्त में बसे!
सर्व यज्ञ हों मेरे लिए,
सर्व हवि का मैं सदा भागी रहूँ,
कभी कोई अपराध न करूँ,
दुर्भाग्य का भागी न बनूँ!
सदा सच्ची भावना मेरे मन में रहे!
सदा सत्या आकूति मेरे चित्त में बसे!
विश्वे देवा हमारा सतर्क अवलोकन करते रहें!
विश्वे देवाः हमारा सत्य पर्यवेक्षण करते रहें!

[अथर्ववेद, कां. १९, सू. ४, ऋ. २, ३; यजुर्वेद अध्याय ३९, ४; ऋग्वेद मंडल १०, १२८, ४.]

[१२५]. दिसम्बर, २००६

206

[विशेष नोट देखो।]

R Dave

अमेरिकन इन्डियन

मैं माटी हूँ इस प्रदेश की पुनीत पुरातन
कहता है जग जिसको इन्डियन, इन्डियन
ठीक बैठता हूँ मैं, हूँ अनुरूप माटी के,
प्राकृतिक परिदृश्य भी हैं अनुरूप हमारे
पुएब्लो वह हो, या हो वह मैसा चट्टान

यह जो सूरजमुखी वन्य हैं, स्वतंत्र हैं न?
यह जो जंगल में हैं बिसुन, अल्हड़ हैं न?
ये माताएँ तीन हमारी, जानते हो न?
स्क्वॉश, बीन, मक्का। देती हैं जीवन-दान
साथ पले हम, हैं ये ही हमरा धन-मान

बदल गया परिदृश्य आज, लुट गया स्वमान
गया जीवन लुट, गँवा दिये अपने अरमान
बेघर भटक रहा, खोया सारा सम्मान
फिर भी मैं माटी हूँ इसकी पुनीत पुरातन

[१२६]. दिसम्बर, २००७.

पुएब्लो, मैसा और बिसुन के लिए विशेष नोट देखिए।

207

(२०७)

RDave

यह माटी

[अमेरिकन इन्डियनों का गीत]

यह माटी सामान्य नहीं है,
यह, जो दिखाई पड़ती है,
यह माटी सामान्य नहीं है!
इसके कण कण बने हुए हैं
मेरे पुरखों के शरीर से,
हाड़-मांस से,
जो हैं सिञ्चित लाल लहू से!
यह माटी सामान्य नहीं है!

नहीं है यह माँ प्रकृति की धरती की मिट्टी,
यह तो है अस्थि की मिट्टी!
धरती की तह तक पहुँचोगे,
जब खोदोगे नीचे गड्ढे में!
यह मिट्टी सामान्य नहीं है!

यह ज़मीन, जो दिखाई पड़ती है,
यह ज़मीन सामान्य नहीं है।
इसके कण कण बने हुए हैं,
सने हुए हैं,
मेरे लहू से,
मेरे मृत पुरखों के लहू से,
यह हमारी है पवित्र माटी,
208 केवल मृतकों की यह माटी,
मृतकों को ही समर्पित है,
उनके लिए सुरक्षित है!
यह ~~मिट्टी~~ माटी सामान्य नहीं है,
यह, जो दिखाई पड़ती है!

[१२८७]. दिसंबर, २००७.

RDave

पति और पौधा

पौधे से भी बदतर हूँ मैं !

देखा था पिछले दिन मैंने,
बड़े प्यार से सींच रही थी पौधे को तुम,
जल नहीं, जैसे पिला रही थी नयनों से दिल को तुम !
कब मेरी बारी आएगी, उदास सोच रहा था मैं
पौधे से भी बदतर हूँ मैं !

होठों पर वह अमृत की मुस्कान, देहयष्टि का कंपन !
वह सहलाना पत्तों को, गोया संजीवक-रस-सिञ्चन !
दिल थामे बैठा था उकड़ूँ, ठूँठ पौधे की नाईं मैं !
पौधे से भी बदतर हूँ मैं !

कौन कहता है, ईश्वर है? है, तो डरता क्यों नारी से?
यज्ञभाग जो है मेरा, दिलवाता नहीं क्यों छिन पौधे से?
पति से बढ़कर पौधा निकला, सोच सोच सूख जाता मैं !
पौधे से भी बदतर हूँ मैं !

[१२८]. मार्च, २००८.

209

RDave

हिरनी

यह हिरनी कहाँ से आई, री रामा!
हिरनी कहाँ से आई ?
खाली था मन का उपवन, रूप-भरनी कहाँ से आई, री रामा!
हिरनी कहाँ से आई ?

जीवन के मधुवन में हिरना
चला अकेला, कोई संग ना
इतने में चौकड़ी भरती को किस वादी से आई, री रामा!
हिरनी कहाँ से आई ?

पतझड़ ने बहार लूटी थी
चेतन ऊपर बर्फ जमी थी
इतने में मधुगंध ~~लिये~~ ~~यह~~ बसन्ती कहाँ से आई, री रामा!
हिरनी कहाँ से आई ?

शीतघात से कराहता मृग
अंधकार में चलता था जग
इतने में स्वर्णिम सुन्दर का लेपन को ले आई, री रामा!
हिरनी कहाँ से आई ?

[१२८]. मार्च, २००८.

210

R.Gaur

बसन्त का पैग़ाम

रोबीन ले आया है आख़िर बसन्त का पैग़ाम
युग पहले निकला था, आया अब है अपने धाम

पतझड़ ने रोका था मुझको, रुका रहा उस ठाम
भूला था कर्तव्य मुझे, मैं अंधा था, अनजान
आऊँगा, आकर जग को कर दूँगा मैं अभिराम
रोबीन ले आया है आख़िर बसन्त का पैग़ाम

आते ही जी उठेगा जग-जीवन, यह मेरा काम
प्रकृति फिर सिंगार सजेगी, नूतन का नव नाम
अणु अणु फिर नाच उठेगा, जीवन उत्सव-धाम
रोबीन ले आया है आख़िर बसन्त का पैग़ाम

धरती को रंगीन बना दूँगा, दे नव परिधान
चिड़ियों को चहकाऊँगा, दे पा सप्तसुरों का जाम
गगनभेदी स्वर गूँज उठेंगे नवसर्जन के तमाम
रोबीन ले आया है आख़िर बसन्त का पैग़ाम

[930]. मार्च २००२.

211

RDave

चाँद आसमानी

यह चाँद आसमानी
बादलों के ललचाते-से, लुभावने-से श्याम-श्वेत परिधान में
लुकाछिपी करती यह सुन्दर चाँद आसमानी
बीच बीच अपनी स्मित-रेखा से सूने, ऊने, सोते संसार में
बिखेर देती ये चमकीले तारक अरमानी
अपनी ही लीला से अनजानी
चाँद आसमानी

दुनिया सारी गहरी नींद की बेहोशी में
अपने सपनों की माया की मदहोशी में
नैसर्गिक इस दिव्य खेल से बनी हुई बिलकुल बेगानी
लज्जा-लाली से अनजानी
चाँद आसमानी

इठलाती चँदा की सूरत मस्तानी
मंथर, मोहक, अलसायी गति मनमानी
सहज भाव से मानो हो गई लास्य-रूप की रानी
मेरा बौराना, वह अनजानी
चाँद आसमानी

[१३१]. मार्च, २००८.

RDave

मेरा परिचय

मैं नया नहीं, पुराना हूँ, पुराना नहीं, पुरातन हूँ
नहीं पहचाना तुमने मुझको? मैं तो वही सनातन हूँ

सृष्टि थी जब प्रलयलीन, औ' सूक्ष्म तत्त्व थे स्पन्दन-हीन
किसने बजाई थी धीरे से तब संजीवन-सूक्त-बीन?
मैं कवि नहीं, नहीं कविता हूँ, मैं साम-संहिता-दर्शन हूँ
मैं नूतन नहीं, पुरातन हूँ

प्रलयोन्मुख थी पृथ्वी अधुना, जब मौन हुआ था धर्म-गान
किसने बचाया था जीवन तब मनुज-दनुज का करके दमन?
मैं अतीत नहीं, नहीं वर्तमान, मैं कालातीत नवजीवन हूँ
मैं नूतन नहीं, पुरातन हूँ

[932]. मई, 2008.

213

RDave

निदाघ

लो! निदाघ मनभावन आया
ऊष्मा-स्वर सुखपावन लाया।
री! निदाघ मनभावन आया

चंड ठंड के प्रचंड कोप को,
जो प्रकृति के मृदुल गात को
रोम रोम कंपित करता था,
त्राण उसीका बनकर आया
लो! निदाघ मनभावन आया

अपराध-बोध ले कर आया, जो
शीत का अधा बन्दी रहा,
जो ऊर्मिबन्ध थे, तोड़ सका
ऋतुराज मुक्त मन नाच उठा
लो! निदाघ मनभावन आया

संकुचित अम्बर था बँधा
निर्झर चुप जड़-भीत था रहा
खगकुल सहमा मौन था बना
सामगान लो! गूँज अब उठा
लो! निदाघ मनभावन आया।

214

RDave

निदाघ

गगनाञ्चल का सँगीत । स्वर्गिक
हरिताञ्चल धरती भी कूजित
बसन्त के प्रस्थान समय, बस!
ग्रीष्म-गान अब गूँज उठा
लो! निदाघ मनभावन आया

[२३३]. जून, २००८.

215

Rdave

क्षितिज पर

क्षितिज पर खड़ा हूँ
शांति के क्षितिज पर खड़ा हूँ
आप कहेंगे
शांति का भी कोई क्षितिज होता है भला
होता है
मैं कहता हूँ होता है
और एक नहीं
अनेक क्षितिज होते हैं शांति के
और यह है उन अनेकों में से एक
जहाँ मैं खड़ा हूँ

एवरेस्ट पर तो पहुँच गये तुम
पर कौन पहुँचा क्षितिज पर
मैं
एक और अद्वितीय
मैं
शांति के क्षितिज पर
संस्कृति के क्षितिज पर
सभ्यता के क्षितिज पर
मानवता का ध्वज फहराता हुआ
आप कहेंगे
ऐसा भी कोई क्षितिज होता है भला
216 होता है
मैं कहता हूँ होता है
और एक नहीं

R.Dave

क्षितिज पर

अनेक क्षितिज होते हैं ऐसे
और यह है उन अनेकों में से एक
जहाँ मैं खड़ा हूँ

[१३३४] जुन, २००८.

217

पत्नी के प्रति सम्बोधि गान

R.Dave

आज तुम सुन्दर लगती हो,
अधिक तुम सुन्दर लगती हो।
इतना रूप कहाँ से लाई नया?
तुम सुन्दर लगती हो।
अधिक तुम सुन्दर लगती हो
आज तुम सुन्दर लगती हो

शब्दकोष सब सेवा में हैं हाथ जोड़ कर
उपमानों की भीड़ लगी है घरद्वारे पर
रूप सजाने नानारंगी स्याही तत्पर
खड़ी लेखिनी है मेरी, भुजप्रात भी आतुर
हैं अपूर्ण, मिथ्या ये सचमुच
शक्तिहीन, अभिव्यक्ति-हीन सब।
अनुपम लगती हो
आज तुम अद्भुत लगती हो
अधिकतर सुन्दर लगती हो
आज तुम सुन्दर लगती हो

भेजे कल्पन-स्पन्दन अवकाशी विश्वों में
कविता के नव मानदंड की परम शोध में
रूप की नई परिभाषा के नव अन्वेषण में
अलंकार औ' उपमानों की खरी खोज में
आये नतमुख, निराश हो कर
218 असफलता का भार उठा कर।
अवर्ण्य लगती हो
आज बहिरन्तर फबती हो
अधिकतम सुन्दर लगती हो [१३५२].
आज तुम सुन्दर लगती हो जुलाई, २००८.

R.Dave

अरुप

[बाँग्ला से अनुवाद]

अरूप! तुम्हारी बानी
अंग में मेरे, चित्त में मेरे मुक्ति की हो दानी.....

नित्यकालिक उत्सव तव विश्व की दीपालिका
मैं तो मात्र मिट्टीदीप, जलाये उसकी शिखा
चिरकालिक आलोकदीप्त ~~कब~~ इच्छा तुम्हारी, स्वामी!.....

जैसे तुम्हारी वसन्त-वायु वने-वने, दिशि-दिशि में
गीत-लिपि तव अंकित करे रंग-पुष्प-पर्ण में
वैसे मेरे प्राण में फूंक दो चेतना तुम्हारी
निज स्वर से पूर्ण कर दो रिक्तता, हे दानी!
विघ्न उसके शुद्ध-शुचि करे तव दक्षिणपाणि.....

[रवीन्द्रनाथ ठाकुर : गीत-वितान – २, १९३१-३२]

[१३६], जुलाई, २००८.

219

RDave

मन की द्विधा
[बाँग्ला से अनुवाद]

मन में क्या दुविधा रख के चले गये
उस दिन भरी साँझ को
जाते जाते दुवार से जाने किस सोच में फेर लिया मुख को
क्या बातें रह गई थीं मन में .....

तुम हो कि हँसकर चल दिये नैन-कोने में,
बैठी बैठी मैं सोचूँ ले निज कँपित हृदय को
तुम तो रहे दूर भुवन में.....

आकाश में उड़ती बक-पंक्ति,
वेदना मेरी उसकी साथी,
पूछना तुमसे इतना ही मुझे,
बिदाईबेला में तुम कुछ न थे बोले?
वह सभी रह गया क्या सिक्त जुही की गंध-वेदन में? .....

[गीत-वितान-२, १९३१-३३]

[१३७]. मुंबई, २००८.

R.Dave

दिन पाँखी

[बांग्ला से अनुवाद]

दिनपाँखी मेरे स्वर्ण-पिंजर में ना रहे
वे जो मेरे नाना रंगीन दिनपाखी
हास्य-रुदन के बंधन वे सह ना सके
वे जो मेरे नाना रंगीन दिन-पाँखी

मेरे प्राण की गान-भाषा
सीखेंगे, थी मेरी आशा
उड़ गये, सकल कथा कह ना सके
वे जो मेरे नाना रंगीन दिन-पाँखी

स्वप्न देखता: जैसे कि आशा से वे
भग्न पिंजर के चहुं ओर घूम रहे
वे जो मेरे नाना रंगीन दिन-पाँखी
यह सब बेदना मिथ्या मेरि क्या?
हैं ये केवाल छाया-पाखी क्या?
आकाश के उस पार कुछ भी नहीं ले जा सके,
ले जा सके क्या?
वे जो मेरे नाना रंगीन दिन-पाँखी

To The Typist:
Please Remove all under-scores.
→ सभी अण्डरस्कोर्स...

[गीत-वितान-2, १९३१-३२]

[१३८]. ..., 2008.

221

RDawle

बज़ुरग

[पंजाबी से ~~अनुदित~~] अनुवाद]

बच बच के विचर रहे
बज़ुरग शरीर में
रौनक लगी हुई है
बचपन से जवानी तक
जो जो किया था
फिर से हो रहा है
यादों की दुनिया में,
बज़ुरग अकेले नहीं हैं!

कभी की मर चुकी माँ से
ज़ोर ज़ोर से बातें करते
हँसीखुशी की कहानियाँ पाते हैं,
बज़ुरग अकेले नहीं हैं।
बीती हुई कल के हम-दम
वर्तमान बन बैठे हैं,
पुरानी जगह, खेत, घर
बज़ुरग साथ उठाये फिरते हैं,
कभी ~~क~~ इन्हें सुनाई देती है
दूध बिलौने की धंम धंम
कभी बाल्टी में टपकती ~~[illegible]~~ दूध की धार,
और कभी तो सुनाई देती है
चौराहे पर अपने बाबा के गाये हीर गावन की लय,
तो कभी भरे मेले में बैठे
222 गप्पें मार रहे हैं,
बज़ुरग अकेले नहीं हैं!

[939]. अगस्त, 2002.

विशेष नोट दीजिए।

~~[illegible]~~ हीर गावन : हीर-राँझा की प्रेम-कथा का संकेत है।

Rdave..

पहुनियाँ
[पंजाबी से अनुवाद]

पहुनी लड़कियाँ
घर बीच लगी हैं ढूँढने
पुराने कोलाहल, पुरानी पहिचानें
अपनी किलकिलाती मस्त आवाज़ें

पहुनी लड़कियाँ
हाथ धरती हुईं अपनी आँखों की कोर पर
देखती हैं घर के कोने-कोने को
परसती हैं अपने कोमल हाथों से हर चीज़ को
रजाइयों, गद्दों, गूँथी चद्दरों और सिरहानों को

ये लड़कियाँ
बूढ़ी मामी से मिलकर
अपनी दिवंगत माँ की बातें करती हैं
अपने स्वर्गवासी मामा की जीवन-कथा सुनाती हैं
यों काट देती हैं सारी रात बातों ही-बातों में

पहुनी ये लड़कियाँ
इक-दूजी का सुख-दुःख देखती हैं
कभी आँसू बहाती हैं
कभी खिल-खिलाकर हँस देती हैं
विवाहोत्सव में नाच-नाचकर बौरा जाती हैं
फिर कुरता-चुनरी ले खुश हो जाती हैं

223

ये पहुनी लड़कियाँ
चली जाएँगी एक-एक कर

Revised.

पहुनियाँ

हाथ हिलाती हुईं
मुड़-मुड़के पीछे ~~देखती हुईं~~ झाँकती हुईं
~~अब~~ हाथों में थमी गठरी सम्हालती हुईं
दुआएं देती
खैर मनाती
चली जाएंगी
पहुनी लड़कियाँ
पहुनी लड़कियाँ

सुश्री सुरीन्दर कौर चाहल की पंजाबी
कविता का अनुवाद।

[१४०]. अगस्त, २००८

विशेष नोट देखिए।

224

RDave

बिरह में आत्मैक्य

[मैथिली से अनुवाद]

अनुक्षण माधव माधव सुमिरत सुन्दरी माधव हो गई
अपना भाव-स्वभाव बिसर गई, अपने ही गुण लुभाई

माधव! अपूर्व तुम्हारा स्नेह
अपने बिरह अपना तनु जर्जर, बचने में भी बड़ा सन्देह

कातर हो प्रातः देखे सखी को, छला छलके पानी
प्रतिक्षण राधा राधा रटती, अस्फुट आधी बानी

राधा समझ बुलावत माधव, माधव के भ्रम राधा
फिर भी न टूटत तीव्र सनेह, बढ़ती बिरह की बाधा

दुहुं दिशि से जलती लकड़ी पर दग्ध कीट-सी आकुल प्राण
यों पेखत प्रिय को सुधामुखी, कवि विद्यापति करे बखान

— [विद्यापति पदावली]

[१४३]. अगस्त, २००८.

225

RDave

वर्षा में विरहिणी राधा
[मैथिली से अनुवाद]

सखि हे! मेरे दुःख का नहीं ओर
ये भरे बादर, है माह भादर, सूना मंदिर मोर

उछल ऊपर घन बरसत संतत, भुवन-भरन हैं बरसत
कंथ बिदेसी, अनंग निष्ठुर, अविरत स्वर शर मारत

वज्र के शतपात बिजुरी, फिर भी मयूर नाचते
मत्त दादुर, चहक डाहुक, हृदय को हैं चीरते

तिमिर भरली सघन यामिनी, बिजुरी की चल पंक्तियाँ
विद्यापति कहे, कैसे बिताऊँगी बिन हरि दिन रतियाँ

[विद्यापति पदावली]]

[१४२]. अगस्त, २००८.

डाहुक : जल-मुरगा, Waterfowl.

226

Please

अन्तिम प्रार्थना
[गुजराती से अनुवाद]

हजारों बरस की संचित हमारी वेदनाएँ
कलेजे को छलनी करतीं हमारी भयकथाएँ
रुधिर-धारा मृतक की औ' नयन-नीर जीवितों के
समर्पित हैं सभी तेरे चरण, प्यारे प्रभु हे!

हमारे यज्ञ का अन्तिम बलि, आमीन कहना
गँवाई थी जो स्वाधीनता पुनः हमको दिलाना
अधिक कुछ मूल्य चाहो तो ज़रूर तुम माँग लेना
हमारे आख़िरी संग्राम में तुम साथ देना

प्रभुजी! देखना तुम आख़िरी यह युद्ध अब हो
चिताना, युद्ध-कारण में यदि दोषित हम हों
हमारे आँसुओं से, रक्तधारा से धुला है
हमारा सैन्य आशिष माँगता तत्पर खड़ा है

नहीं जाना, हमारे पंथ क्या आफ़त खड़ी है
बस यही जानते, माँ पीड़िता-सी बुला रही है
जीवन माँ का बचे, इस काज शुभ मृत्यु-घड़ी है
हमें क्या फ़िक्र अब, हरि कृपा की तव रही है

भले हो घोर रात्रि, आप दीपक ले खड़े हैं
भले रण में शयन हो, आप गंगाजल लिये हैं
रहें लड़ते, उन्हें रण-खंजरी-गर्जन सुना दो
227 जो हैं मरते, उन्हें मधु-बंसरी के स्वर सुना दो

[1983]. अगस्त, 2008.

विशेष नोट देखिए।

कसुंभिया रंग

[गुजराती से अनुदित]

लागा कसुंभिया रंग
राज! हमें लागा कसुंभिया रंग
लागा कसुंभिया रंग
राज! हमें लागा ~~कसुंभिया रंग~~ प्रेम-शौर्य का रंग

जननी के हिरदे में पौढ़न करते करते
पी लिया कसुंभिया रंग
सनेह-सिक्त दूध की धारा में धारा में
पा लिया कसुंभिया रंग
राज! हमें लागा कसुंभिया रंग

बहिनी के कंठ में से छन के आती
लोरियों में घुटा हुआ रंग
भीषण रात्रि में पहाडों के गर्जन में
मिश्रित कसुंभिया रंग
राज! हमें लागा कसुंभिया रंग

दुनिया के वीरों के ताज़ा बलिदानों में
भभका कसुंभिया रंग
सागर के पार स्वाधीनता की कबरों में
महका कसुंभिया रंग
राज! हमें लागा कसुंभिया रंग

टपका भक्तों के इकतारों से मस्तीभर
चाखा कसुंभिया रंग
प्यारी दिलदार के पांवों की मेहंदी पर
चूमा कसुंभिया रंग
राजा हमें लागा कसुंभिया रंग

नवली दुनिया के स्वप्नों में कवियों ने
गाया कसुंभिया रंग
मुक्ति की क्यारी में निज रक्त देनेवालों ने
पाया कसुंभिया रंग
राज! हमें लागा कसुंभिया रंग

228

पीड़ित की अश्रु-धार में, हाहाकार में
बहाया कसुंभिया रंग
शहीदों के धधकते एक एक निश्वास में
सुलगा कसुंभिया रंग
राज! हमें लागा कसुंभिया रंग

धरती के भूखे कंगलों के कपोलों पर
छलका कसुंबल रंग कसुंभिया
बिस्मिल बेटों की अम्माओं के माथे पे
हंसता कसुंभिया रंग
राज! हमें लागा कसुंभिया रंग

घूट घूट के प्याले भर रखे, हे मनमौजी!
पीना कसुंभिया रंग
दोरंगों को देख डरते यदि, हे टेकी!
पीना कसुंभिया रंग
राज! हमें लागा कसुंभिया रंग

[१९४८]. अगस्त, २००८.

विशेष नोट देखिए।

229

कन्दील

[गुजराती से अनूदित]

कन्दील मंद जले
रे! मेरी कंदील मंद जले

५८ आज गृहि अतिथि आवे
पल पल पुड्घा पडे प्रतिध्वनि/
सकल नगर सोया है, स्वामी!
तेरा स्वागत कौन करे?
रे! मेरी कंदील मंद जले

रथ तेरा गरजत गगनांचल
धरती धडकती रहे
ओ परदेसी! कहँ देंगे पौढ़न?
नैनन नीर झरे
रे! मेरी कंदील मंद जले

"शाम ढले आऊंगा, सजनी!"
यह कह चला गया
आज युगांतर बीता, तेरी/अब तेरी/
पदध्वनि निकट बजे

शाम ढली, रजनी भी गुज़री
हाय! प्रभात दिखे
रथ कहां, अतिथि कहां, कहां पूजन?
नींद में स्वप्न सरे!
रे! मेरी कंदील मन्द जले

[१४५], अगस्त, २००८.

*विशेष नोट देखिए।

230

उर्दू कविताएँ

RDave

कलामे-रूह

मैं आदमी हूँ, वली का कोई नक़ाब नहीं,
मरीज़ हूँ, हकीम का कोई ख़िताब नहीं।

कुचल रहा है जहाँ हमको इक ज़माने से,
है तेरी नज़रे-रहम का कोई जवाब नहीं।

क़बूल, मैं शिया, सुना, जनाब आप सुन्नी,
कि राहे-इश्क़ में मज़हब का कोई हिसाब नहीं।

सराबे-हस्ती मैं, आबे-हयात आप मेरे,
मैं शोला, आप क्या शबनम का कोई ख़्वाब नहीं?

फटा है चाक पूरा, कुछ हमें अज़ाब नहीं,
वुजूदो अदम पै तेरे कोई हिजाब नहीं!

[९४६]. १९७२, १९९१.

शब्दार्थ :
वली = सन्त; सराबे-हस्ती = अस्तित्व की मरीचिका;
आबे-हयात = अस्तित्व का जल, अमृत-जल; अज़ाब = दुःख;
चाक = कटा या फटा हुआ स्थान; वुजूदो अदम = अस्तित्व
231 और अनस्तित्व; हिजाब = पर्दा; लज्जा।

RDave

मच्छर

जब जब जहाँ जाऊँ, वहाँ अपना लिए खंजर
हर मोड़ पर, हर दौड़ पर आते रहे मच्छर

घर तो बराबर साफ़ था, छिड़की दवा भी थी
लाहौल! मच्छरदानी में घुसते रहे मच्छर

चुनाव की तैयारी की बरसा ऋतु आई
हर वोट पीने के लिए उड़ते रहे मच्छर

यह कौन कहता है, हुआ मैलेरिया नाबूद ?
नाला-ए-सियासत में पकते रहे मच्छर

क्यों कर बचाऊँ आपको? ये कुरसी के दिलबर
जो जो भी बैठा, काटते-डँसते रहे मच्छर

जा भाग मैं जल्दी अरे! पहुँचा खुदा के पास
औतार एक नया धरो, मर जायें सब मच्छर

[०४७]. मार्च, १९८६.

लाहौल : "अल्लाह के सिवा और कोई ताकत नहीं।" यह शब्द "लाहौल वला कुवत इल्ला व इल्लाह" का संक्षिप्त रूप है।

232

नाला-ए-सियासत : राजनीति का नाला।

R Dave

आज़ाद ग़ज़ल

कूद कूद के हार गया, लाँघ न पाया
इक छोटा-सा लम्हा है आपके और मेरे दरमियान

खड़े रह गये आमने-सामने, मिल न पाये
हवा कुछ ऐसी चली आपके और मेरे दरमियान

पतझड़ के पत्ते झड़ते हैं मस्त आलम लिये
उनकी दास्ताँ बिखरी है आपके और मेरे दरमियान

सिग्रेट मैं ज़रूर पिऊँगा, ऐ दर्दे-केन्सर!
दोस्ती रहे या दुश्मनी आपके और मेरे दरमियान

तुम आओ न आओ, ऐ फ़रिश्ता-ए-मौत!
ड्रग मैं ज़रूर रखूँगा आपके और मेरे दरमियान

कौन कहता कि पियक्कड़ हूँ, या रब!
यह तो है छलकना पैमाने का आपके और मेरे दरमियान

अमन चाहता हूँ, जंग नहीं, ओ जहाने-अरब!
सवाल है सिर्फ़ ऑइल का आपके और मेरे दरमियान

चाहें न चाहें, नंबर एक तो रहेगा अम्रिका ही
233 किस बात में, यह राज़ रहा आपके और मेरे दरमियान

मंदिर मस्जिद या चर्च बने, क्या फ़र्क़ है, मेरे महरम!
बात वोट की रही पक्की आपके और मेरे दरमियान

RDave

<u>आज़ाद ग़ज़ल</u>

काबा जायेंगे ज़रूर, सुन लो, ऐ वायज़!
किस रास्ते से, यह बात रही आपके और मेरे दरमियान

जो जानते हैं, जानते हैं, नहीं जानते उनका जानना क्या?
यह गूँगों का राज़ रहा आपके और मेरे दरमियान

ग़ज़लों का क्या? लिखते रहेंगे, क़लम तोड़ते रहेंगे
मतलब कुछ निकला या नहीं, यह आपके और मेरे दरमियान

[१४८]. नवम्बर, १९९२.

नोट: विशेष नोट देखिए।

234

RDave

किरायेदार और मालिके-मकान

खड़े हैं सीतारामजी
बाबरी मसजिद के आंगन में
ले कर अपना बोरिया बिस्तर
बैसाख की तपती धूप में।
कहा मैंने:
पालागन जी!
बात क्या है, जो तप रहे हैं उमस में?
तब बोले सिरी रामचंदर जी:
बरख़ुरदार!
खाली नहीं करते घर हमारा
यह ज़िद्दी किरायेदार ख़ुदा!
बीत गये हैं कोई चार सौ साल
मगर नाम नहीं लेते टलने का, यह ख़ुदा!

तब कहा मैंने सीता जी से:
जै हो सीता मैया की!
परेशाँ क्यों हो रही हैं आप बेकार में,
बैसाख की इस तपती दुपहरी में?
नज़दीक ही है एक ~~अच्छा~~ अच्छा-सा मकान,
ले चलिए राम जी को वहाँ
और रहिए चैन से उसमें।

मगर नारी हठ होती है न!
235 और सीता जी भी तो नारी हैं न!
नहीं,
रसोई करूँगी तो,

Rdave

किरायेदार और मालिके-मकान

सीता-रसोई में ही।
और राम जी ' तो कम नहीं!

जैसे ही पहुँचा मैं अल्लाह मियाँ के हुजूर में,
साफ़ साफ़ बोल दिया उन्होंने अपनी अकड़ में :
यह है मेरा मकान,
न मैं किरायेदार हूँ
न राम मालिके-मकान!

पसोपेश में पड़ गया अब बेचारा मैं!
फिर अचानक एक बात उठी मन में,
बोला :
इतना बड़ा है यह मकान,
तीनों की रहाइश इसमें बड़ी आसान।
आप तीनों अगर चाहें,
साथ-साथ रहना तो है आसान।
अगर सच कहें,
रह तो रहे हैं आप एक ही मकान में
जब से बना है यह जहान।
न कोई किरायेदार,
न कोई मालिके-मकान,
सब का मस्कन है सारा जहान!

236

[२४९]. फरवरी, १९९३.

मस्कन : घर

RDave

नाकाम इश्क़

कुछ भी खोया नहीं, तब भी सभी खोया ही गया
दिल तो है सबूत पर, मता-ए-दिल लूटा ही गया

चाह थी, खोल वह पर्दे-नज़र फ़िरदौं ही बनूँ
पहरे थे अब्रू के कड़े, नहीं जाया ही गया

उस शब्द के समँदर का न मिला इक क़तरा
क़तरा-ए-खूँ को सितमगर कोई पिला ही गया

इश्क़ का नाम न लो, लफ़्ज़ से डरता हूँ, अज़ीज़!
इक इन्सान हूँ, इन्सान भी माना न गया

दे दिया तुमको यह चिराग़े-दिल, मेरे हमदम!
यह सलामत अँधेरा सारा घर जला ही गया

अब ज़रा सब्र करो, सहरे-इश्क़ अब होगी
यह कलाम सुनने क़यामत का दिवस आ ही गया

[१५०]. सितम्बर, १९९३

237 मता-ए-दिल : दिल की दौलत
अब्रू : भौंहें
क़तरा-ए-ख़ूँ : ख़ून की बूँद
अज़ीज़ : प्रिय
सहरे-इश्क़ : इश्क़ की सुबह
कलाम : बात, वचन

RDave

नाक़बूलियत

लगी है आग मेरी जिस्मो-रूह में
कहता हूँ, बारिश में नहा रहा हूँ

काँपता है रोआँ रोआँ मेरा सर्दी से
कहता हूँ, मारे-गरमी जल रहा हूँ

दुःख दावानल फैला है ज़िन्दगी में
कहता हूँ, मौज़े-दरिया में तिर रहा हूँ

चाहती हैं निकलना आहें लबों से
कहता हूँ, ख़ामोश! नमाज़ पढ़ रहा हूँ

उठ गई रूह तो कबकी इस जिस्म से
कहता हूँ, क़ज़ा में जान फूँक रहा हूँ

[१५५१]. अप्रैल, १९८४.

238

RDave

दिल का सिलसिला

दिल का क्या है सिलसिला! कब जल उठा, बुझ गया!

दिल तो नहीं चिराग़, जिसको शाम हुई कि जलाया,
जलता रखा रातभर, सुबह हुई कि बुझाया।
दिल तो नहीं क़न्दील, जिसको बाती बदल के जलाया,
जलता रखा अँधेरे में, हुआ उजाला, बुझाया।
तैल की कमीबेशी से, भाई! दिल का क्या सिलसिला?
दिल का क्या है सिलसिला! कब जल उठा, बुझ गया!

दिल का है प्रोग्राम क्या! कब जी उठा, मर गया!
दिल है दिल, कंप्युटर नहीं, कि कल दबाई, चलाया,
चलता रखा जितना-चाहो, मरज़ी हुई, बन्द किया।
दिल कंप्युटर-चिप भी नहीं, बिगड़ी, बदल के चलाया।
प्रोग्रामों की कमीबेशी से दिल का क्या सिलसिला?
दिल का क्या है सिलसिला! कब जल उठा, बुझ गया!

[९५२]. अक्तूबर, १९९४.

239

Rdave ## ये औरत जीव

यह औरत भी एक बला है।
है तो बड़ी खूबसूरत,
मगर है ग़ज़ब की बला!
ऐसी बला,
जिसे न टालते बनता है, न पालते!
मिठाई का वह टुकड़ा,
जिसे न बिन खाये बनता है, न बिन बदहज़मी किये!
दिल ही दिल है उसके पास,
जो बन जाता है पल में परमाणु
और दूजे ही पल में परमाणु-बम,
जिससे हो जाता है शौहर का दिल बेचारा खंडहर
जल जल कर!

आते रहते हैं बस
उफ़नाव ही ~~उफ़न~~ उसमें।
ज्वार-भाटा जज़्बातों का,
ऊर्मियों का
भावनाओं का।
पल में तोला, पल में माशा!
मर्द जो कहता है सीधा,
लगता है उसको उल्टा!

240 मगर दिल तो होता है मर्द के भी,
आते रहते हैं उफ़नाव उस दिल में भी।
लेकिन भेजा ~~भ~~ भी तो होता है उसके,

RDave

ये औरत जीव

जो सोचता हूँ, समझता हूँ।
काश!
एक आधा टुकड़ा भी भेजा होता तो,
सोच सकते ~~थ~~
ये औरत जीव!

अब आप कहेंगे, जनाब!
खैरियत नहीं है आपकी,
गर सुन गया आपकी यह कलाम
कोई औरत जीव!
तो हम कहेंगे, जनाब!
चले जायेंगे खुदा के मुकाम,
वहाँ तो नहीं होगा
कोई औरत जीव!

[१५३]. १९९५.

241

बरसाती आग

R.Dave

ग़ज़ब हुआ लो बरस पड़ी है बदरी मुझ पर
क़तरा क़तरा अगन सजी है बदरी मुझ पर

बरसा की पहली बूंदें चिनगारी निकलीं
शोलों की सारी पहनाती बदरी मुझ पर

कैसी माया? रोम रोम पर जलतीं बूंदें
क़ातील कीड़े रेंग रहे दुखियारी मुझ पर

क्यों बतलायें हम किसी को दिल के फफोले
ले-देने की छिपी निशानी न्यारी मुझ पर

आंसू में छिप छिप के जियरा जाता सजनि
गुपचुप आई मौत की पाती प्यारी मुझ पर

ये किसकी लाशें ढलतीं? मेरी अपनी ही
क़तरा क़तरा फेंक रही यह बदरी मुझ पर

बदरी को बोलो मत बरसे बदरी मुझ पर
ग़ज़ब हुआ, यह ग़ज़ब ढा रही बदरी मुझ पर॥

[१९४८].

RDave

उर्दू

सर-आँखों पर बिठलाते अपने हम ले कर उर्दू
प्यारी ज़बाँ है हमारी यह सरहिन्द की बोली उर्दू
बड़ा पुराना लिटरेचर, मीठी जोशीली उर्दू
सारे भारत की प्यारी, ना समझो उर्दू उर्दू !

एक पड़ोसी ने फरमाया, बोली उसकी उर्दू
कश्मीरा उनको दे दो, वर्ना होगी वह उर्दू !
हाथों में पकड़ा बम छीन लिया बीच उर्दू
कश्मीरा ने छोड़ा उस पर, भागे उर्दू उर्दू !

फिर आया ख़ादिम एक इन्सान ज़बाँ ले उर्दू
बोला, बोली है प्यारी मतवारी हमारी उर्दू
हक़ नहीं क्रिस्तानी-हिन्दू का, है इस्लामी उर्दू !
बोली उर्दू, नहीं मज़हब की, मैं हूँ सबकी उर्दू !

तुम महलों में रमते हो, कुटिया हमारी है उर्दू
शानवान से बैठे तुम, मज़दूर बने हम उर्दू
तुम बन बैठे मिलियनेर, हमरी मज़दूरी उर्दू !
ग़र बदलोगे नहीं, जाओगे बन तुम उर्दू उर्दू !

सरकारें हैं या तवाइफ़ें ये ? बैठी हैं बीच उर्दू !
मज़हब औ' ईमान, वोट सब करके बैठीं उर्दू !
243 अब भी जागो, चेतो, छोड़ो गोरखधंधा उर्दू
नंगा कर देगी जनता वरना* सब उर्दू उर्दू !

[१५५], फरवरी, १९९७.

उर्दू : (१) बाज़ार, (२) बाज़ार की बोली; सरहिन्द : पूरा भारत; ख़ादिम : (१) सेवक, (२) इस्लामी धर्मस्थान का अधिकारी ।

आइना-ए-ग़ज़ल

देखा है जब से तुमको, यह दिल मेरा नाशाद है,
चाहा है जब से तुमको, यह दिल मेरा फ़रहाद है।

अंधी गली में है पड़ा यह दिल तुम्हारे इश्क़ की,
हीर-राँझा की जहाँ में कम नहीं तादाद है!

इश्क़ सच्चा, इश्क़ झूठा, बहस बेमीआद है,
ना जिलाता, मौत देता, दिल तेरा बेबाक है!

है लिए कंदील नहीं हूँ खड़ा मैं राहबर,
तू जला चाहे बुझा, बस! दिल मेरा बेताब है।

छोड़ शोख़ी, देख ख़ुद को आइना-ए-ग़ज़ल में,
दिल के भीतर ही तुम्हारे दिल मेरा आबाद है!

[१२६]. जनवरी, १९९८.

RDave

मुकर्रर मंज़िल

मुझको अब यहाँ नहीं होना चाहिए
वक़्त को फ़िज़ूल नहीं खोना चाहिए
बिलकुल गुमनाम ही हो जाना चाहिए
जल्द ही अलविदा कह देना चाहिए।

रात भली, सूरज की रोशनी नहीं चाहिए
सूरज को काजल लगाना ही चाहिए
दुनिया का यह दस्तूर स्वीकारना ही चाहिए
बिन आहट जहाँ से हट जाना ही चाहिए

ज़िन्दगी को चैन से जीने देना चाहिए
राह का रोड़ा अब नहीं बनना चाहिए
ख्याती की हवस अब छोड़ देना चाहिए
मौत को मुकर्रर मंज़िल बनाना चाहिए

~~मुझको अब यहाँ नहीं होना चाहिए जिन्दगी~~
~~जल्द ही अलविदा कह देना चाहिए।~~
जितना जल्द हो बिस्तर खोलना चाहिए
उस पर फिर आराम से सो जाना चाहिए

[१५(७)]. मई, २००१ - २०१८.

245

R.Dave

वक़्त

वक़्त कुछ ऐसा है, जगह कुछ ऐसी है
चुप कुछ बैठा हूँ, वजह कुछ ऐसी है

क्यों नहीं होती रूदादे-इश्क़ अरे! इनसे ?
खोल नहीं पाता, गिरह कुछ ऐसी है

ढूँढ़ रहा था जिसको मैं सदियों के ढेरों में
वह पल नहीं मिलता, निगह कुछ ऐसी है

बोया आबोगिल से मैंने यह छोटा-सा नग़मा
पनप नहीं पाता, सतह कुछ ऐसी है

रब को छोड़ बना अनल हक़ अपनी मस्ती में
समझा नहीं सकता, फ़रह कुछ ऐसी है

[१५८]. फरवरी, 2002.

रूदादे-इश्क़ : प्रेम की कथा या खबर
गिरह : गांठ, समस्या
आबोगिल : दुनिया बनाने के दो तत्व, पानी और मिट्टी
अनल हक़ : 'मैं सत्य हूँ', 'मैं ईश्वर हूँ'
फ़रह : खुशी, आनंद

246

R Dave

ज़िन्दगी के बदलते पहलू

पुरानी यादें नई बन आती हैं
गहरे पानी में पैठ लगाती हैं
आँखों की मिट्टी को नम बनाती हैं

इन्सान को इन्सान की पहचान थी
मुफ़लिसी में भी बख़ूबी शान थी
दिलों का दिलों से ~~एक~~ रिश्ता था
सच्चाई का सच्चाई से वास्ता था
बीते पल छू कर छिप जाते हैं, नज़ारा भी नहीं कर सकता
फ़िज़ाँ को ले गुज़र जाते हैं, गँवारा भी नहीं कर सकता

इस आग में जलना मनाही नहीं
पर जलने से यह बुझेगी भी नहीं
इस बारिश में भीगना मनाही नहीं
पर भीगने से सुकूँ मिलेगा भी नहीं
इन्सान का दिल संगे-लोह हो गया है, पिघलाया नहीं जा सकता
इन्सान का दिल गुमराह हो गया है, राहे-रास्त पर नहीं आ सकता

जहाँ में शोरोगुल फैला है
ख़ामोशी को कोई सुनता ही नहीं
मुँह खोलना भी यहाँ गुनाह है
मौन भी तो अब बची पनाह है
बेगुनाह घिरे हैं पिंजड़े को, गुनहगार मैं भीतर खड़ा हूँ
अदल कबका सुनाया गया है, तराजू ले हाथ खड़ा हूँ

[245]. जुलाई-अगस्त, 2003.

राहे-रास्त : सीधा-सरल और सही मार्ग; संगे-लोह : क़ब्र पर लगा पत्थर;
अदल : इन्साफ़

Rsave

नग़मा

जब हम भी तो दिल रखते थे
तस्वीर हमारी अनोखी थी
मीलों तक बातें होती थीं
~~भी~~ मीठी रुसवाई होती थी

हैं याद हमें अब तक वे दिन
वे रातें कैसे कटती थीं
हो जाते जिन पर सब कुरबां
वे अदाएँ हम पर मरती थीं

अपने मासूम इशारों से
मदभरी नज़र से छलकाते
वह कभी न खूटने वाली-सी
हाला के प्याले भरती थी

दाता बन कर दे डाला दिल
होशोहवास की बात न थी
खाली मकान-सा अब यह दिल
जिसमें बसती इक बस्ती थी

रिन्दों का शोर गुम-शुदा हुआ
पैमाने प्याले ढूँढ़ते हैं
248 मरघट-सी मुर्दनी छाई है
मधुशाला जहाँ महकती थी

[१९६०]. नवंबर, २००२.

रिन्द : धर्म ~~कों~~ के बंधनों को न मानने वाला
गुमशुदा : जो खो गया हो

RDave.

नाकामी

आँखों का प्यार भी खो बैठा,
क्या हाल तू अपना कर बैठा

उम्मीदों का ताबूत रचा
उसके भी कण-कण कर बैठा

दरिया-ए-दिल की शेखी, पर
छिछला नाला तू बन बैठा

आया लम्हा, तू जी न सका
कल से तू मुहब्बत कर बैठा

चलता-फिरता पीने वाला
एक बूँद भी जाम में भर न सका

अब मौत से उम्मीद रखता है
ज़िन्दगी ~~से~~ को अपनी कर न सका

[१६१]. ~~[illegible]~~ २००६.

249

R.Dave

ग़ज़ले-रूह

ख़ुशी ख़ुशी अब जा रहा हूँ
ग़ज़ले-रूह सुना रहा हूँ

एक मिसरा गा गया हूँ
दूसरा अब गा रहा हूँ

नज़्म जीवन की अधूरी
पूरी अब कर पा रहा हूँ

वक़्त को ठहरा के थोड़ा
लम्हे कुछ ले जा रहा हूँ

कर न शिकवा कोई, हमदम!
दे दुआएँ पा रहा हूँ

यह ग़मे-हस्ती भला क्यों?
प्राण तो दे जा रहा हूँ

ज़िन्दगी भर जो न छोड़ा
दे नसख्वुफ़ जा रहा हूँ

बाद मदफ़न चुप न सोया
250 क़ब्र में भी गा रहा हूँ

[१६२]. अप्रैल, २००५.

(२५०)

Rdave...

विशेष नोट

क्रमांक	शीर्षक	नोट
१५.	एक कबीर नहीं बना सकते?	अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी समिति, यु.एस.ए. के रोचेस्टर (न्यूयोर्क) अधिवेशन में प्रस्तुत।
२०-22.	मृत्युसूक्त, १,२,३.	क्षितिज (यु.एस.ए.), अगस्त, २००४.
३२.	नारी	रोचेस्टर अधिवेशन में प्रस्तुत, विश्वा अप्रैल-जून २०२० में प्रकाशित (पृ.४९).
३३.	ख़ुद का सोना	विश्वा (यु.एस.ए.), जुलाई, २००२.
३४.	कवि	सिरेक्युस (न्यूयोर्क) की कवि-गोष्ठि में प्रस्तुत।
४३.	सती	विश्वा, जुलाई, १९९८.
४४.	बर्फ़ से	सिरेक्युस की कविगोष्ठि में प्रस्तुत; 'अभिव्यक्ति' की Web site पर.
५४.	किसी पार्क में महात्मा......	विश्वा, जनवरी, १९९८.
६१.	उत्तर-पूर्वीय अमेरिका में बसन्त	उत्तर-पूर्वीय (North-East) अमेरिका में बसन्त के कुछ दिन जाड़े (Winter) का और कुछ दिन गर्मी (Summer) का हिस्सा होते हैं।
६८.	दो गुरुओं का संमिलन	सन् 1718 के बाद दोनों ग्रहों का निकटतम आना। मंगल, बिच्छुआ (Scorpian), पारिजात इत्यादि विविध ग्रह एवम् नक्षत्र।

251

Rbave

विशेष नोट

क्रमांक	शीर्षक	नोट
७६.	भारत और पाकिस्तान के प्रति	विश्वा, जुलाई-अक्तूबर, २०००.
७८.	अणुशस्त्र	विश्वा, जनवरी, २००३.
८६.	एलियन गन्ज़ाल्वेस	Elian Gonzales. सन् २००० में क्युबा से अमेरिका में अवैध रीति से आने के हेतु आती एक नाव समंदर में पलट गई थी। छह वर्षीय एलियन की माता डूब गई थी। शिशु फ्लोरिडा में लाया गया। उसको अमेरिका में रखा जाय या वापस भेजा जाय, इस प्रश्न पर गजग्राह हुआ था। आखिर फेडरल सरकार के मार्शलों ने सशस्त्र हमला कर उसे ले लिया और क्युबा वापिस भेज दिया था।
११९.	धरती का गान (Song of the Earth)	Native American Songs and Poems, 1995.
१२४.	मेधा	वैदिक मेधा की परिकल्पना आधुनिक मेधा की परिकल्पना से अधिक व्यापक है। चितिशक्ति अथवा परम बुद्धि का मूर्तिकरण मेधा है। Intelligence and Mental Power Personified. विश्वा, अप्रैल-जून (2020) के अंक में प्रकाशित, पृ. ४८.
१२५.	आकृति	वेदकालीन ऋषियों की एक अनूठी और अद्वितीय परिकल्पना (Concept). आकृति मनुष्य की सूझ, समझदारी और सयानेपन (wisdom) की देवी है।
252	Penetrating insight, understanding, wisdom (242)	बृहस्पति, इस जगत के पालयिता देव (Jupiter; nurturing deity, maintaining)

४७६.
४७८.

एलियन गन्ज़ालेस

२६. एलियन गन्ज़ालेस (Elian Ganzales).

सन् २००० में क्यूबा से अमेरिका में अवैध रीति से घुस जाने के हेतु क्यूबन लोगों से भरी हुई एक नाव समंदर में पलट गई, डूब गई, जिसके कारण अधिकतर यात्रिक डूब गये। उस नाव में एलियन गन्ज़ालेस नामका एक छह वर्षीय बालक भी अपनी माँ के साथ आ रहा था। उसकी माँ डूब गई। इधर फ्लोरिडा राज्य में उस शिशु को लेकर काफी गहमागहमी हुई। फ्लोरिडा में बसे क्यूबा-निवासी उसे क्यूबा वापस नहीं भेजना चाहते थे। उन्होंने उसकी रक्षा के लिये उसे एक सुरक्षित घर में रखा और वे पहरा देने लगे। परन्तु ~~सरकारकी~~ फेडरल सरकार के मार्शलों ने सशस्त्र ~~हमला कर~~ हमला कर एलियन को ले लिया और क्यूबा वापस भेज दिया।

~~मेधा~~ —

~~आकृति~~ —

६८. दो गुरुओं का संमिलन, १-२.

१९९७ में आकाश-दर्शन करते समय गुरु और शुक्र के ग्रहों को परस्पर ठीक ठीक निकट पाया, ~~किन्तु~~ तब भी परस्पर से अधिक दूर रहे। १९९९ में तो वे परस्पर के इतने निकट आ गये, कि जैसे मिल गये हों।

हिरन - मृगशीर्ष; व्याध = व्याध का तारा; हंस = swan; मंगल : मंगल का ग्रह; बिछुआ = scorpian; पारिजात बिच्छू में पारिजात का तारा होता है।

- (अभिव्यक्ति इन्टरनेट वेब ~~पत्र~~ साइट पर)

११. ~~१००~~
१२४. मेधा

मेधा और आकूति के सूक्तों का अनुवाद इस प्रकार किया गया है, जिससे वैदिक समय में शब्दों के जो प्रचलित या रूढ़ अर्थ होते थे, ~~कि~~ वे स्पष्ट हो जाये। ~~इसलिए~~ वैदिक शब्दों को

Rbawe

विशेष नोट

क्रमांक	शीर्षक	नोट
	Presiding deity	सूझ-समझदारी के देव भी हैं। कदाचित् वे आकृति के भी अधिष्ठाता हैं। अतः उनके कारण आकृति भी प्रसन्न होती है।
१२५, १२६	अमेरिकन इन्डियन और यह भारी	पिछली शताब्दी तक यहाँ के मूल निवासी लोगों के गाल (native Indians) ऐसे ही होते थे। पुएब्लो (Pueblo): एक प्रकार का सामुदायिक और पंचायती गाँव। मेसा: कोलोरेडो में Mesa Verde National Park की चट्टानों पर बने हुए घर। बिसन, Bison: जंगली अमेरिकन और युरोपियन भैंस।
१३९.	बज़ुरगा	सुश्री सुरीन्दर जी कौर चाहल के २००८ में प्रकाशित पंजाबी कविता-संग्रह कुंजिआँ में से। ये पंजाबी कवयित्रियों में बहुत प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित हैं। आपकी पुस्तक की एक सुन्दर समीक्षा Hindustan Times के अंक में Ode to the Panjabi Woman शीर्षक से प्रकाशित हुई है।
253		
१४०.	पहली लड़कियाँ	कुंजिआँ, २००८.

PDave

विशेष नोट

ज्यों का त्यों रखने से अनुवाद संक्षिप्त तो हो जाता है, और अनुवादक का कार्य भी तो सरल हो जाता है, किन्तु सूक्तों का अर्थ स्पष्ट नहीं हो पाता। उदाहरण के अनुसार मेधा को 'प्रथमा' कहा गया है, जिसका अर्थ 'सर्व प्रथम' भी होता है, और 'सर्वोत्तम' भी, 'सर्वाधार भी'! इसके और अर्थ भी हैं।

चितिशक्ति अथवा परम बुद्धि का मूर्तीकरण या मानवीयकरण (दैवीकरण!) मेधा है: Intelligence and mental power personified. परन्तु इस सूक्त की कुछ ऋचाओं के द्वारा यह समझ में आता है कि वैदिक मेधा की परिकल्पना आधुनिक मेधा की परिकल्पना से अधिक व्याप्त है।

हमें यह भी याद रखना चाहिए कि वैदिक संस्कृत में उदात्त, अनुदात्त और स्वरित, ये तीन स्वरभार (pitch accent) होने के कारण अर्थ में परिवर्तन हो जाता है, अतः एव ~~स्वरभार अर्थ~~ ठीक ठीक अर्थप्राप्ति के लिए स्वरभार लिखे हुए होने चाहिए।

१२५. आकूति :

वेदकालीन ऋषियों की यह एक अनूठी और अद्वितीय कल्पना है। आकूति की संकल्पना या परिकल्पना (Concept) को समझना/समझाना अत्यंत कठिन है। अनुवाद करना तो और कठिन है! वैसे नाम होने के कारण अनुवाद करने की आवश्यकता नहीं है।

आकूति मनुष्य की सूझ, समझदारी और सद्बुद्धि (understanding, wisdom) की देवी है। आकूति मनुष्य की संकल्प-शक्ति और सन्मति की देवी है। मनुष्य की इन भावनाओं का अथवा शक्ति का मूर्त स्वरूप (Personification) है। आकूति के प्रसादन से मनुष्य को जीवन के रहस्य समझ में आते हैं, उसकी संकल्प-शक्ति बढ़ती है, आंतरिक या अन्दरूनी या आत्मिक सूझ और समझदारी बढ़ती है, और उसको सुख-समृद्धि, और ऐश्वर्य और सम्मान मिलता है।

बृहस्पति भक्ति, श्रद्धा और निष्ठा के देव हैं। वे अनन्य

RDave

विशेष नोट

भाव और स्वार्पण के देव हैं, सूझ-समझदारी (wisdom & eloquence) के देव हैं। इतना ही ~~नहीं~~ नहीं, वे इस महान् जगत् के पाता या पालयिता देव हैं। ऋचाओं पढ़ने पर ऐसा लगता है कि वे आकृति देवी के भी अधिष्ठाता हैं, अतः उन्हीं के कारण आकृति देवी भी प्रसन्न होती है।

केवली = एक मात्र प्रेमिका।

~~→ १०१ शान्ति-मंत्र का गान 'अनुभूति' वेबसाईट (web site) पर~~.

१२६ और १२७ - अमेरिकन इंडियन / यह मारी } ~~१२वीं और~~ पिछली शताब्दी के अन्त तक अमेरिका के मूल निवासी जातियों के गान इसी प्रकार के होते थे।

⇒ ७६. भारत और पाकिस्तान के प्रति। विश्वा, जुलाई-अक्तूबर, २००२, पृ. ३६.

७८. अनुशासन विश्वा, जनवरी, २००३, पृ. ९.

क्रमांक ७३० से ८१ की कविताएँ कार्गिल काण्ड के बाद में लिखी गई हैं।

~~Save~~

विशेष नोट

क्रमांक	शीर्षक	नोट
१४३.	अन्तिम प्रार्थना	क्रमांक १४३,१४४ और १४५ गुजराती के लब्ध प्रतिष्ठित कवि श्री. झवेरचंद मेघाणी, जिनको महात्मा गाँधी ने "राष्ट्रीय शायर" का बिरुद दिया, की कविताओं के अनुवाद हैं। ग़ज़लकार शायर गनी दहीवाला के शब्दों में : (गुजराती से अनुवाद] अजब साहित्य को परोस गया रसथाल, मेघाणी! नई शैली, नये छंद, निराले स्वर, मेघाणी! ~~१४४.~~ युगवन्दना, १९३५
१४४.	कसुंबिया रंग	युगवन्दना, १९३५.
१४५.	कन्दील	युगवन्दना, १९३५.
१४६.	कलामे-रूह	नवम्बर, १९९१ में पाकिस्तान एसोशियन के मुशायरे में पेश।
१४८.	आज़ाद ग़ज़ल	पाकिस्तान एसोशियन, मुशाइरा, १९९९. सन् १९८० के वर्षों में बम्बई, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश के कुछ शायरों ने ग़ज़लों के अरबी छन्दों की आवश्यकता का नियम न ~~रखके~~ पालने का निश्चय किया था, किन्तु रदीफ़-काफ़िया को ज़रूरी समझ कर जो ग़ज़लें लिखीं, उनको उन्होंने 'आज़ाद ग़ज़ल' की संज्ञा दी।
१५०.	नाकाम इश्क़	क्षितिज, दिसंबर, २००४.
१५४.	बरसाती आग	विश्वा, जुलाई, १९९५.

254

Save

कविताओं की प्रथम पंक्तियों की सूचि
(क्रमांक के साथ)

RDave

प्रथम पंक्तियाँ	पृष्ठ
कवि मर गया [४५]	66 ~~७८~~
कवि मर गया। कवि, [४६]	८१ ~~८२~~
कविता कभी खाली नहीं होती [९२]	१५०
कहो, करोगी क्या तुम? ~~[६]~~ [९]	१६
कूद कूद के हार गया, लांघ न पाया [१४८]	२३३ ~~२३५~~
कुछ भी खोया नहीं, तब भी सभी खोया ही गया [१५०]	२३७ ~~२३९~~
क्षितिज पर खड़ा हूँ [१३४]	२१६ ~~२१८~~
खड़े हैं सीतारामजी [१४९]	२३५ ~~२३७~~
खुद गया हूँ खो, अरे! इस देश में [३३]	५८ ~~५९~~
खुशी खुशी अब जा रहा हूँ [१६२]	२५० ~~२५२~~
ग़ज़ब हुआ जो बरस पड़ी है बदरी मुझ पर [१५४]	२४२ ~~२४४~~
गा मधुर, मन! गान गा तू [६७]	११७ ~~११८~~
गाने लग जाती हूँ, ताकि विचार आना बन्द हो [६५]	११५ ~~११६~~
गोली गाँधी को लगी या हमको? [५३]	९४ ~~९५~~
घूमने को आकाश चला था [१]	१
चल वीरे! हम रो लें-१ [४९]	८८ ~~८९~~
चल वीरे! हम रो लें-२ [५०]	८९ ~~९०~~
चलो एक दिन मैं मुस्काती हूँ [७१]	१२४ ~~१२५~~
जब जब जहाँ जाऊँ वहाँ अपना लिये खंजर [१४७]	२३२ ~~२३४~~
जब मैं जाऊँगा [१०६]	~~१२७~~ ~~१७७~~ 166
जब हम-तुम मिले [७२]	~~१२८~~ 126
जब हम भी तो दिल रखते थे [१६०]	२४८ ~~२५०~~
256 जब षण्मुगम् जाएगा [२९]	५२ ~~५३~~
जम्मू-कश्मीर एक राज्य है [७५]	१३२ ~~१३३~~

RDave

प्रथम पंक्तियाँ — पृष्ठ

R.Dave

प्रथम पंक्तियाँ — पृष्ठ

R Dave

प्रथम पंक्तियाँ — पृष्ठ

259

RDave

प्रथम पंक्तियाँ

RDave

~~270~~
261